ऋषि प्रसाद
वर्ष : ६
अंक : ३६
दिसम्बर १९९५
४.५०

# 'ऋषि प्रसाद'

**ऋ**षियों के प्रसाद का, मोल न कोई तोल ।
छलका दरिया आनंद का, वचन बड़े अनमोल ॥

**शि**व स्वरूप मेरे सद्गुरु, कोटि कोटि प्रणाम ।
भक्ति ज्ञान और ध्यान का, देते सबको दान ॥

**प्र**भु प्रेम की प्यास हो, दिल में गुरु का ध्यान ।
मन रंगा हरिनाम से, पाया सहज ज्ञान ॥

**सा**हिब सबमें रम रहा, नूरे नज़र से जान ।
अंतर के पट खोल ज़रा, अपने को पहिचान ॥

**द**या, धर्म, उपासना चौथा साधू संग ।
पी ले दिल की प्याली से हरिनाम की भंग ॥

*– श्रीमती जानकी ए. चंदनानी 'साक्षी'*
*अहमदाबाद*

# ऋषि प्रसाद

वर्ष : ६
अंक : ३६
९ दिसम्बर १९९५

सम्पादक : के. आर. पटेल

मूल्य : रू. ४-५०

**सदस्यता शुल्क**

भारत, नेपाल व भूटान में

| | | |
|---|---|---|
| वार्षिक | : द्विमासिक संस्करण हेतु | : रू. 30/- |
| | मासिक संस्करण हेतु | : रू. 50/- |
| आजीवन | : द्विमासिक संस्करण हेतु | : रू. 300/- |
| | मासिक संस्करण हेतु | : रू. 500/- |

विदेशों में

| | | |
|---|---|---|
| वार्षिक | : द्विमासिक संस्करण हेतु | : US $ 18 |
| | मासिक संस्करण हेतु | : US $ 30 |
| आजीवन | : द्विमासिक संस्करण हेतु | : US $ 180 |
| | मासिक संस्करण हेतु | : US $ 300 |

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५
फोन : (०७९) ७४८६३१०, ७४८६७०२.

प्रकाशक और मुद्रक : के. आर. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा,
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५ ने
उमा ऑफसेट, शाहीबाग एवं भार्गवी प्रिन्टर्स, राणीप,
अहमदाबाद में छपाकर प्रकाशित किया ।



हे मेरे अन्तर्यामी ! अब मेरी ओर जरा कृपादृष्टि करो... । बरसती हुई आपकी अमृतवर्षा में मैं भी पूरा भीग जाऊँ... । मेरा मन-मयूर अब एक आत्मदेव के सिवाय किसीके प्रति टहुँकार न करे ।

हे प्रभु ! हमें विकारों से, मोह-ममता से, साथियों से बचाओ... अपने आप में जगाओ ।

## प्रस्तुत है...



*'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें ।*

# मंगलमय दृष्टि

**- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू**

वेद कहता है :

**सर्वस्तरतु दुर्गाणि**
**सर्वो भद्राणि पश्यतु ।**
**सर्वसद्बुद्धिमाप्नोतु**
**सर्वसर्वस्तु नन्दतु ॥**

'सभी अपनी अपनी संकीर्णता से बाहर निकलें, सभी मंगलमय देखें, सबको सद्बुद्धि मिले और सब एक-दूसरे की सहायता करें ।'

**सर्वस्तरतु दुर्गाणि ।**

हम अपने-अपने दायरे से, अपने-अपने दुर्ग से बाहर निकलें । अपने-अपने छोटे-मोटे दुर्ग और दायरे में मकड़ी भी जी लेती है व बच्चे पैदा कर लेती है और चूहे भी अपने बिल में रह लेते हैं । यह कोई बड़ी बात नहीं है । बड़ी बात तो यह है कि हम अपने-अपने संकीर्ण दायरों व दुर्ग से बाहर निकलकर दुनिया में कुछ उत्तम, व्यापक व महान कार्य करें और उत्तम में उत्तम जो परमात्मा है, उसके नाते जियें । पुत्र-परिवार के लिये तो चिड़िया भी जी लेती है ।

**जीना उसीका जीना है**
**जो औरों के खातिर जीता है ।**
**उसका हर कदम रामायण**
**और हर कर्म गीता है ॥**

वेद कहता है : **सर्वो भद्राणि पश्यतु ।**

'हम सब मंगलमय देखें ।'

आज के युग की यह बदनसीबी है कि आदमी दूसरे को देखता है, अपने को नहीं । दूसरों के दोषों को देखता है, अपने दोषों को नहीं देखता । इसी कारण आज चारों ओर निन्दा, नफरत, अलगाव, दोषारोपण, हिंसा आदि का वातावरण निर्मित हो रहा है । दूसरों के दोष देखनेवालों का चित्त दोषी हो जाता है, यह उस बेचारे को पता ही नहीं चलता ।

तुलसीदासजी कहते हैं :

**सुनहू तात मायाकृत गुण अरु दोष अनेक ।**
**गुण देखहि दोष न देखहि उभय देखहिं अविवेक ॥**

हम लोगों में अविवेक बढ़ रहा है । फलत: अशांति और दुर्गुणों का विस्तार हो रहा है । भारत ही नहीं, विश्व के सभी देशों का यही हाल है । अद्वैत की दृष्टि, आत्मदृष्टि, सत्कर्म की दृष्टि व मुक्ति की दृष्टि चली गई । स्वार्थ, दोष, अशांति व रोग बढ़ गये । भोगवृद्धि से रोग बढ़ गये, दोषदर्शन से घृणा बढ़ गई, घृणा से हिंसा-प्रतिहिंसा की वृद्धि हुई । मानव मानव का शत्रु बन गया ।

> *पेट भरने और बेटा पैदा करने की बुद्धि तो भगवान ने सबको दे रखी है लेकिन मनुष्य की बुद्धि में उस सत्यस्वरूप ईश्वर को प्राप्त करने की क्षमता भी ईश्वर ने दी है ।*

आज का मानव मानव से भयभीत है, अशांत है व शोषित हो रहा है । पिताने बच्चे को पढ़ाया-लिखाया यह सोचकर कि मेरा बेटा डॉक्टर बनकर कमाकर मुझे सुखी करेगा लेकिन बेटा अपने को ही सुखी नहीं कर पा रहा है । जनता का शोषण करते-करते कसाई की तरह कैंची चलाकर अनावश्यक आपरेशन भी किये जा रहा है । नाहक का यह धन बेटे को नाहक की मति देता है और नाहक की मति से उसके बेटे-बेटियों की नाहक की गति हो रही है ।

आज डॉक्टर, वकील, इंजीनियर, अनपढ़, धनवान, निर्धन, सत्तावान व सत्तारहित सभी दु:खी हैं । कल्याणकारी दृष्टि के स्थान पर हमारी स्वार्थी व शोषक दृष्टि हो गई, इसीलिये जीवन में दु:खों की वृद्धि होने लग गई । वैदिक परम्परा से हमने मुँह मोड़ लिया और

भौतिकवादी निगुरे लोगों का हम अनुकरण करने लगे हैं । पश्चिम से जो बात बढ़िया होकर आवे, हम सब उसको स्वीकार लेते हैं क्योंकि वह 'इम्पोर्टेड' है, लेकिन अपनी संस्कृति व शास्त्रों का हम पालन करने में कतराते हैं । इसीलिये वेद कहता है :

सर्वसद्बुद्धिमाप्नोतु ।

हम सबको सद्बुद्धि मिले । बुद्धि तो कीट, पतंग, खटमल को भी है । मच्छर के पास भी बुद्धि है । वह भी कभी दाढ़ी या सिर के बाल पर नहीं बैठता क्योंकि जानता है कि यहाँ बोरिंग करने से कुछ नहीं मिलेगा । बच्चा पैदा करने की अक्ल तो मच्छर में भी है । भोजन कहाँ मिलेगा ? कैसे लिया जाता है ? वह भी पता है और मुसीबत आ जाय तो भागने की अक्ल भी मच्छर में है । पेट भरने और बेटा पैदा करने की बुद्धि तो भगवान ने सबको दे रखी है लेकिन मनुष्य की बुद्धि में सत्यस्वरूप ईश्वर को प्राप्त करने की क्षमता भी ईश्वर ने दी है। वह सत्य को पानेवाली, सत्य को समझनेवाली, सच्चे सुख को हजम करनेवाली बुद्धि हमको प्राप्त हो ।

अंतिम चरण में वेद भगवान कहते हैं :

सर्वसर्वस्तु नन्दतु ।

हम एक दूसरे के सहायक बनें । एक दूसरे के पैर खींचनेवाले न बनें ।

काशी विश्वविद्यालय के मैदान में गामा पहलवान का सम्मान समारोह आयोजित था। उद्घोषक ने घोषणा की : ''मेरे प्यारे विद्यार्थियों, मित्रों, आचार्यों, प्राध्यापकों ! हमारे बीच विश्वविख्यात गामा पहलवान पधार चुके हैं । प्यारे विद्यार्थियों ! आप सबको भी गामा पहलवान बनना होगा ।''

गामा पहलवान ने कहा : ''प्यारे विद्यार्थियों ! आपको गामा का अनुकरण नहीं करना है । गामा तो दूसरों को पछाड़ता है तब जीतता है । दूसरों को गिराकर बड़ा होता है , उठाकर नहीं । आप सबको मदनमोहन मालवीय होना होगा, दूसरों को उठाना होगा । दूसरों को जो उठाता है, वह बड़ा है, न कि जो दूसरों को गिराता है । गामा तो गिराकर ब्रड़ा बनता है और मदनमोहन मालवीय दूसरों को उठाकर बड़े बने हुए हैं ।''

*आपको गामा का अनुकरण नहीं करना है । गामा तो दूसरों को पछाड़ता है तब जीतता है । आप सबको मदनमोहन मालवीय होना होगा, दूसरों को उठाना होगा । मदनमोहन मालवीय दूसरों को उठाकर बड़े बने हुए हैं ।*

आज मनुष्य धर्म, कर्म, वेद व सनातन के अमृत को भूलता जा रहा है और इन्द्रियों के क्षणिक सुख को ही सब कुछ मानता है । इसी की नकल में सब एक दूसरे को धमाधमी करते हैं । पड़ौसी पड़ौसी का शोषण करके सुखी होना चाहता है । एक वर्ग दूसरे वर्ग को, एक प्रांत दूसरे प्रांत को और एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को दबोचकर सुखी होना चाहता है । हिंसा के बल पर राज्य करना चाहकर सुखी बन निश्चिन्तता की नींद लेना चाहता है । सात-सात बार पूरी पृथ्वी के प्राणी मारे जा सकें इतने बम बनाये जा चुके हैं फिर भी विनाश की इन सामग्रियों के निर्माण का सिलसिला थमा नहीं है । बन्दूक हाथ में रखकर आदमी निश्चिन्त जीवन जीना चाहता है ।

*भगवान बुद्धि तो सबको देते हैं लेकिन भगवान के नाते जो सत्कर्म करता है, सेवा-कार्य करता है, जप-ध्यान करता है और बदले में नश्वर नहीं चाहते हुए भगवान से केवल प्रेम करता है, प्रीतिपूर्वक भजता है, उसको भगवान बुद्धियोग देते हैं ।*

आपने सुना होगा कि शेर जब जंगल में चलता है तो कई बार पीछे मुड़कर देखता है कि कोई मुझे खा न जाय । उसने हाथी जैसे विशाल प्राणी को भी फाड़कर उसका रक्त पिया है फिर उसे कौन खा सकता

(शेष पृष्ठ १० पर)

# श्रद्धा में उतार-चढ़ाव

## - पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

साधकों को प्रश्न होता है कि गुरुदेव से मंत्रदीक्षा लेते समय जितनी श्रद्धा होती है वैसी ही श्रद्धा साधना के मार्ग पर चलते हुए बाद में कम क्यों होती जाती है ? श्रद्धा यथावत् बनी रहे इसके लिए किन विघ्नों से बचना चाहिए ? श्रद्धा की डोर कभी न टूटे इसके लिए क्या करना चाहिए ?

गुरुमंत्र लेते समय जो श्रद्धा होती है वह श्रद्धा टिक नहीं पाती इसका कारण यह है कि जब हम नये-नये होते हैं तो गुरु के द्वारा बतायी गयी साधनाविधि को उत्साह से करते हैं । उससे हमें कुछ झलकें भी मिलती हैं लेकिन साधना का वह उत्साह हम बनाये नहीं रख पाते इसलिए श्रद्धा भी कम होने लगती है । यदि उत्साहपूर्वक साधना को हम ठीक से बढ़ाते रहें तो श्रद्धा भी विकसित होती जायेगी । किन्तु इस रास्ते में विघ्न आते ही हैं... सबको आते हैं जिसके फलस्वरूप साधक का साधना के प्रति उत्साह कम होता जाता है ।

> *गुरुमंत्र लेते समय जो श्रद्धा होती है वह श्रद्धा टिक नहीं पाती इसका कारण यह है कि जब हम नये-नये होते हैं तो गुरु के द्वारा बतायी गयी साधनाविधि को उत्साह से करते हैं लेकिन साधना का वह उत्साह हम बनाये नहीं रख पाते इसलिए श्रद्धा भी कम होने लगती है ।*

श्रद्धा है ही एक अनोखी चीज, जो घटती-बढ़ती, हिलती-डुलती रहती है । अनेक जगहों पर जाने के बाद अंत में श्री रामकृष्ण परमहंसजी के चरणों में विवेकानंदजी की श्रद्धा हुई थी और उनके श्रीचरणों में बैठने पर विवेकानंद को अद्भुत अनुभव हुआ था । परमहंसजी की संप्रेक्षण शक्ति के प्रभाव से विवेकानंद का शीघ्र ही ध्यान लग गया । विवेकानंद ऐसे अधिकारी साधक थे, फिर भी जीवन में छः बार श्री रामकृष्ण परमहंस के प्रति उनकी श्रद्धा टूटी थी । कभी तो स्वयं श्री रामकृष्ण परमहंस ने उनका हाथ पकड़ा और कभी उन्होंने चरण पकड़कर माफी मांगी । जब विवेकानंद जैसे साधक की श्रद्धा हिलती है तो आपकी हिल जाये इसमें क्या आश्चर्य ? किन्तु फिर भी श्रद्धा को टूटते बचाना चाहिए ।

श्रद्धा मन का विषय है और मन चंचल है । मनुष्य जब सत्त्वगुण में होता है तब श्रद्धा पुष्ट होती है ।

सत्त्वगुण बढ़ता है सात्त्विक आहार से, सात्त्विक विहार से, सात्त्विक वातावरण में रहने से एवं सत्संग करने से । मनुष्य जब रजो-तमोगुणी जीवन जीता है तो नीचे के केन्द्रों में, हल्के केन्द्रों में पहुँच जाता है । मति जब नीचे चली जाती है तब लगता है कि झूठ बोलने में सार है, कपट करने में सार है, कोर्ट-कचहरी जाना चाहिए... आदि-आदि ।

हम जब दुकान पर बैठते थे तो समझते थे कि भाई जो बोल रहा है उसमें सार है ।

भाई कहता कि 'सुधर जा, सुधर जा ।' क्योंकि मैं बारह बजे तक तो कमरे में ही साधना करता और शाम को चार बजे ही दुकान से उठकर चला जाता ध्यान-भजन के लिए । इसलिए वह मुझे बहुत समझाता था ।

दुकान में गद्दी पर बैठूँ तो भाई की बात कभी- कभी ठीक लगती और साधनाकक्ष में बैठूँ तो उसकी बातें बिल्कुल बेकार लगती । सत्संग सुनने कहीं जाता तो सत्संग में ही सार दिखता और दुकान पर बैठने पर नोटों में सार दिखता । फिर विचार करता कि मान लो दुकान पर बैठा और एक बड़ा सेठ हो गया - फिर क्या ?

अमीर होने के बाद भी कैसा जीवन ? दूसरे सेठों का भी जीवन देखता और तुलना करता। तुलना करता तो विवेक जाग उठता और विवेक जगने पर संतों में श्रद्धा बढ़ जाती ।

संग का रंग तो लगता ही है। वनवास के समय लक्ष्मणजी श्रीरामजी के साथ थे। अयोध्या के राजमहल के समस्त सुख-वैभव, माता-पिता, पत्नी को छोड़कर लक्ष्मणजी श्रीरामचरणों के अनुयायी बनकर वनवास गये थे। ऐसे लक्ष्मणजी की श्रद्धा भी अपने प्रिय भ्राता श्रीरामजी के प्रति हिल गयी थी ।

*अयोध्या के राजमहल के समस्त सुख-वैभव, माता-पिता, पत्नी को छोड़कर लक्ष्मणजी श्रीरामचरणों के अनुयायी बनकर वनवास गये थे। ऐसे लक्ष्मणजी की श्रद्धा भी अपने प्रिय भ्राता श्रीरामजी के प्रति हिल गयी थी ।*

एक बार वनवास के दौरान लक्ष्मणजी बोल उठे :

''वनवास आपको मिला है, मुझे थोड़े-ही मिला है ? लाओ मेरा मेहनताना। मैं आपकी इतनी सेवा करता हूँ !''

श्रीरामजी सब समझ गये। उन्होंने कहा :

''लक्ष्मण ! जहाँ तुम खड़े हो वहाँ की थोड़ी मिट्टी साथ ले लो। आगे चलकर सब हिसाब समझ लेंगे ।''

लक्ष्मणजी ने आज्ञा का पालन किया। थोड़ी दूर जाने पर पश्चाताप की अग्नि में लक्ष्मणजी का हृदय जलने लगा और वे श्रीरामजी के चरणों में गिर पड़े : ''प्रभु ! मुझे माफ कर दो... मुझसे बड़ा अनर्थ हो गया...''

श्रीराम : ''लक्ष्मण ! तुम जो मिट्टी साथ लाये हो उसे जमीन पर बिछाकर उसके ऊपर खड़े हो जाओ ।''

जैसे ही लक्ष्मणजी उस मिट्टी पर खड़े हुए तो पुनः उनके मन में विपरीत विचार आने लगे और वे अपनी सेवा का मूल्य मांगने लगे । तब श्रीरामजी ने कहा :

''लक्ष्मण ! अब इस मिट्टी पर से उतर जाओ ।''

ज्यों-ही लक्ष्मणजी उस मिट्टी से उतरे त्यों-ही श्रीरामजी के चरणों में गिरकर माफी मांगने लगे । इस प्रकार कई बार हुआ। आखिर उन्होंने श्रीरामजी से पूछा : ''प्रभु ! आखिर इसका रहस्य क्या है ? मैं जब इस मिट्टी से हटता हूँ तो आपके प्रति हृदय अहोभाव से भर उठता है एवं आपके प्रति किये गये दुर्व्यवहार के लिए हृदय पश्चाताप की ज्वाला से जल उठता है और इस मिट्टी पर चढ़ने पर आपके प्रति अश्रद्धा हो जाती है ।''

*मैं जब इस मिट्टी से हटता हूँ तो आपके प्रति हृदय अहोभाव से भर उठता है एवं आपके प्रति किये गये दुर्व्यवहार के लिए हृदय पश्चाताप की ज्वाला से जल उठता है और इस मिट्टी पर चढ़ने पर आपके प्रति अश्रद्धा हो जाती है ।*

श्रीरामजी बोले :

''लक्ष्मण ! यह उसी स्थान की मिट्टी है जहाँ शुंभ-निशुंभ नामक दो दैत्य भाई आपस में ही लड़कर मरे थे। इस मिट्टी के प्रभाव से ही मेरे प्रति तुम्हारी अश्रद्धा हो जाती थी ।''

जब वर्षों बाद भी मिट्टी तक का इतना प्रभाव रहता है तो अन्य मनुष्यों के संग का प्रभाव किसी मनुष्य पर पड़े इसमें कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। जहाँ के लोग स्वार्थी हैं, नास्तिक हैं वहाँ के वातावरण में उनके सूक्ष्म परमाणु होते हैं जिसका प्रभाव हम पर पड़ता है और हम नीचे के केन्द्रों में आ जाते हैं जिससे हमारी श्रद्धा डाँवाडोल होने लगती है । जब हम शिविर में आते हैं, सत्संग में आते हैं, साधकों से मिलते हैं तो श्रद्धा बढ़ती है । अतः अपने संग का, वातावरण का बहुत ध्यान रखना चाहिए ।

श्रद्धा बनी रहे उसके लिए क्या करना चाहिए ? अपनी श्रद्धा को बनाये रखने एवं विकसित करने के लिए अपना आहार शुद्ध रखें। यदि असात्त्विक आहारादि के कारण मन में जरा भी मलिनता आती है तो श्रद्धा घटने लगती है । अत: श्रद्धा को बनाये रखने के लिए आहार की शुद्धि का ध्यान रखें ।

पवित्र संग करें, सत्संग में जाएँ एवं पवित्र ग्रंथों का अध्ययन करें । श्री रंगअवधूत से किसीने पूछा :

''आप इतने महान् हो गये हैं । अब आपको क्या अच्छा लगता है ? संतों को जो प्रिय लगे उसमें अवश्य सार होता है ।''

*जहाँ के लोग स्वार्थी हैं, नास्तिक हैं वहाँ के वातावरण में उनके सूक्ष्म परमाणु होते हैं जिसका प्रभाव हम पर पड़ता है और हम नीचे के केन्द्रों में आ जाते हैं जिससे हमारी श्रद्धा डाँवाडोल होने लगती है। जब हम शिविर में आते हैं, सत्संग में आते हैं, साधकों से मिलते हैं तो श्रद्धा बढ़ती है।*

उन्होंने कहा : ''मुझे और तो कुछ भी प्रिय नहीं लगता किन्तु संतों का जीवन-चरित्र पढ़ना अभी-भी अच्छा लगता है । संतों के जीवन-चरित्र पढ़कर ही मैं इतना महान् बना हूँ ।''

संतों के जीवन-चरित्र पढ़ने से श्रद्धा बढ़ती है ऐसा श्री रंगअवधूत का मानना था। क्योंकि उसमें हमें यह जानने को मिलता है कि कितना-कितना सहन करके भी वे महापुरुष साधना के पथ पर चलते रहे और पहुँच गये अपने लक्ष्य परम पद तक । यह बात हमारे लिए भी प्रेरणास्रोत बन जाती है और हमारी श्रद्धा की रक्षा करने में, उसे बढ़ाने में सहायक बन जाती है ।

## पू. बापू के सत्संग कार्यक्रम

**(१) अकोला (महा.) में ज्ञान भक्ति योग सत्संग वर्षा :** दिनांक : ३० नवम्बर से ३ दिसम्बर सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३-३० से ५-३० वसंत देसाई स्टेडियम, स्टेशन रोड़। सम्पर्क फोन : २६८१७

**(२) भूसावळ में दिव्य सत्संग-वर्षा :** दिनांक : ६ से १० दिसम्बर सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३-३० से ५-३० स्थान : डी. एस. हाईस्कूल मैदान। संपर्क : २२१९२, २३५५०, २३५०२

**(३) बम्बई में सत्संग योगामृत :** दिनांक : १३ से १७ दिसम्बर। सुबह ९ से ११ शाम ५ से ७. अंधेरी स्पोर्ट्स कॉम्प्लेक्ष, अंधेरी (वेस्ट). संपर्क फोन : ६४३३१२७, ५१३७१२९, २६५१०९७, ८७३५९७५, ६२३३८९५

**(४) सूरत में वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर** : दिनांक २१ से २४ दिसम्बर । **विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर :** दिनांक : २५ से २७ दिसम्बर। संत श्री आसारामजी आश्रम, वरीयाव रोड़, जहाँगीरपुरा, सूरत । फोन : ६८५३४१

**(५) आलंदी (जि. पूना) में ज्ञान-भक्ति सत्संग समारोह :** दिनांक : ३० और ३१ दिसम्बर

**(६) अहमदाबाद आश्रम में उत्तरायण का शिविर :** दिनांक १२ से १५ जनवरी ९६. संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद-५. संपर्क फोन : ७४८६३१०, ७४८६७०२.

**(७) पानीपत (हरियाणा) में ज्ञानवर्षा** दिनांक : २३ से २८ जनवरी १९९६ सुबह ९ से ११ शाम ४ से ६. हुड्डा फेस टु, कम्यूनीटी सेन्टर के सामने । सम्पर्क फोन : २३६८०, ३००३४.

**(८) सूरत आश्रम में होली शिविर** दिनांक : २ से ५ मार्च ९६.

# आत्मलाभ की ओर

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

कहीं तन दुःखी कहीं मन दुःखी
चिंता चित्त उदास ।
जिसे देखिये सब दुःखी
सुख त्यागी के पास ॥

भगवान ने भी कहा है :

त्यागात् शांतिरनंतरम् ।

त्याग से शीघ्र ही शांति मिलती है तथा परमात्म-रस का अनुभव होता है । राजा भर्तृहरि ने अनुभव किया कि भोग में रोग का भय है, बल में शत्रु का भय है, रूप में बुढ़ापे का भय है, शास्त्र में वाद-विवाद का भय है, गुण में दुष्ट का भय है और शरीर के सिर पर मृत्यु का भय नाच रहा है । सुखी वह है जो सबसे वैराग्य करता है ।

श्रीमद्भागवत् में गोकर्ण अपने पिता से कहता है :

''पिताजी ! अब संसार से वैराग्य करो । 'बेटों का क्या होगा ? परिवार का क्या होगा ?' इस चक्कर से निकल जाओ । हम अपना प्रारब्ध लेकर आये हैं । आप पिछले जन्म में किसीके बेटे थे । अभी भी यह शरीर आपका नहीं है । आपका होता तो कहने में चलता । आप नहीं चाहते हो कि यह बीमार होवे फिर भी हो जाता है । फिर भला यह आपका कैसे हो सकता है ? यह तो मोह-ममता है कि 'बेटा मेरा, फलाना मेरा, फलाना मेरा-' एक रब ही अपना है, बाकी सब धोखा है । **वैराग्यरागरसिको भव: भक्तिनिष्ठः** । वैराग्य में राग करो और परमात्मा का रस पाओ, भक्तिनिष्ठ हो जाओ । इसीसे आपका कल्याण होगा ।''

आत्मदेव ब्राह्मण ने अपने बेटे का उपदेश सुना और अपने जीवन का उद्धार कर लिया । भर्तृहरि भी चले गये अपने गुरु के चरणों में और अपने जीवन को ब्रह्ममय बना लिया । माँ कौशल्या भी चली गई थी गुरुदेव शृंगी ऋषि के द्वार पर । आत्मा के उद्धार के लिये राजसुख की जरूरत नहीं है । राम के राज्य की भी जरूरत नहीं है आत्मसुख के आगे । ऐसा वैराग्य है माँ कौशल्या का ।

*आत्मदेव ब्राह्मण ने अपने बेटे का उपदेश सुना और अपने जीवन का उद्धार कर लिया । भर्तृहरि भी चले गये अपने गुरु के चरणों में और अपने जीवन को ब्रह्ममय बना लिया । माँ कौशल्या भी चली गई थी गुरुदेव शृंगी ऋषि के द्वार पर ।*

तुलसीदासजी ने कहा है :

जानिहि तब ही जीव जागा ।
जब सब विषय विलास विरागा ॥

जीवात्मा तब जागा, जब विषय-विलास में उसका वैराग्य जागा । तब उसे परमात्मरस, परमात्मसुख मिला और जगत का सुख तो उसके पैरों तले पड़ा रहता है । इन्द्र का वैभव भी ब्रह्मज्ञानी के पैरों तले है । वह ब्रह्मज्ञान पा लो । उसीके लिये तो मनुष्य जन्म मिला है । कब तक पच-पचकर मरोगे ? पच मरने के लिये तुम्हारा जन्म नहीं हुआ है अपितु अमर रस पीकर अमर आत्मा-परमात्मा में एक होने के लिये तुम्हारा जन्म हुआ है लेकिन जो पूर्वाभ्यास पड़ा हुआ है, वह छूटता नहीं है । जानते हैं कि कोई सार नहीं है, सब मरने के लिये जा रहे हैं । जो मिला हुआ है वह देनेवाले का है । 'मेरा-मेरा' करके कई कमबख्त मर गये और प्रेत होकर भटक रहे हैं ।

वास्तव में जो हमारा है, उसका पता नहीं और जो हमारा नहीं है, उसकी ममता छूटती नहीं । यह

पूर्व का अभ्यास है । पूर्व की, 'मेरा-मेरा' कहने की आदत को बदले बिना कोई भी पूरा सुखी नहीं हुआ है । बहुत बोलने की आदत है तो मौन रखो, आदत नियंत्रित हो जाएगी । बहुत देखने की आदत है तो नासाग्र दृष्टि रखो, बहुत खाने की आदत है तो उपवास की आदत डालो, विषय-विकारों का मजा लेने की आदत है तो संयमपूर्वक जियो । पुरानी गंदी आदतों को निकालने के लिये जीवन में अच्छी आदतों का अवलम्बन लेना पड़ेगा । अशुद्ध आदत मिटाने के लिये सावधानी से नहीं चलेंगे और आदत शुद्ध करने का अभ्यास नहीं करेंगे तब तक कितना भी धन, सौन्दर्य, सत्ता, वाहवाही मिल जाए, भीतर से खटका बना रहेगा, भय बना रहेगा ।

*श्रीकृष्ण सारथि बने हैं फिर भी अर्जुन भयभीत हो रहा है । जब अर्जुन ने भगवान से ब्रह्मज्ञान पाया तब अर्जुन शोक, भय, चिन्ता व बंधनरहित हो गया तथा निर्लेप ब्रह्मज्ञानी होकर अपने कर्त्तव्य का उसने निर्वाह किया ।*

नानकजी ने कहा है :

**निर्भव जपे सकल भव मिटे ।**
**संतकृपा ते प्राणी छूटे ॥**

उस निर्भय निराकार को जपो जो अमर आत्मा है, जहाँ मौत की भी दाल नहीं गलती, जहाँ लेशमात्र भी दुःख नहीं है, भय का 'भ' नहीं है, चिंता का 'च' भी नहीं है, क्लेश का 'क' भी नहीं है, मुसीबत का 'म' नहीं है, जहाँ फिक्र का 'फ' भी नहीं है, उस अकाल पुरुष का, अमर आत्मा का, परब्रह्म का, अपने असली स्वभाव का सुमिरन कर लो । अन्यथा, भगवान के साथ रहने के बाद भी अर्जुन जैसी किंकर्त्तव्यविमूढ़ता हो सकती है । श्रीकृष्ण सारथि बने हैं फिर भी अर्जुन भयभीत हो रहा है । जब अर्जुन ने भगवान से ब्रह्मज्ञान पाया तब अर्जुन शोक, भय, चिन्ता व बंधनरहित हो गया तथा निर्लेप ब्रह्मज्ञानी होकर अपने कर्त्तव्य का निर्वाह किया ।

**अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ।**

पूर्व के अभ्यास को मिटानेवाला अभ्यास करो और वैराग्य से इस मन को वश करो । जो भी बुरी आदत है, उसके विपरीत करो । देर से उठने की आदत है तो सवेरे जल्दी उठने के उपाय अपनाओ । जिन्हें अनिद्रा का रोग है वे सिर व पैरों में गाय का घी मलें एवं बैठे-बैठे १० मिनट तक लम्बे ॐकार का उच्चारण करें । जो भी बुरी आदत है, गंदा अभ्यास है उसके विपरीत करो तो आप परमात्मा को पा लोगे । जिन कारणों से दुःख आता है, उनसे विपरीत कार्य करो तो दुःख मिट जाएगा । जिस कारण से जन्म-मरण हो रहे हैं, उसके विपरीत सोचो तो मुक्ति हो जाएगी ।

दूसरी बात यह कि हमें किसी ब्रह्मज्ञानी महापुरुष का सान्निध्य मिल जाय और वे अपनी दुनिया का थोड़ा-सा अभ्यास कराके, कीर्तन-भजन कराके अपना थोड़ा-सा स्वाद चखा दें, अपने अभ्यास का थोड़ा-सा अमृत हम पर बरसा दें तो हमारा काम बन जाए ।

*ब्रह्मज्ञानी महापुरुष का सान्निध्य मिल जाय और वे अपनी दुनिया का थोड़ा-सा अभ्यास कराके, कीर्तन-भजन कराके अपना थोड़ा-सा स्वाद चखा दें, अपने अभ्यास का थोड़ा-सा अमृत हम पर बरसा दें तो हमारा काम बन जाए ।*

**ब्रह्मज्ञानी की दृष्टि अमृतवर्षी ।**

वे अपनी दृष्टि से आत्मामृत की बूँदें हम पर बरसा दें तो हमारी उल्टी आदत, उल्टा स्वभाव स्वतः ही बदलता जाएगा । जैसे कचरे के ढेर पर कोई चिंगारी फेंक दे और हम उसे फूंकते रहें तो ढेर जल जाएगा । मंत्रदीक्षा वह चिंगारी है जो करोड़ों जन्म के पाप, ताप और उल्टे अभ्यास को जलाकर भस्म कर देती है और साधक को कुन्दन बना देती है ।

भगवान शंकर ने कहा है :

**गुरुमंत्रो मुखे यस्य तस्य सिद्धयन्ति नान्यथा ।**
**दीक्षया सर्वकर्माणि सिद्धयन्ति गुरुपुत्रके ॥**

'जिसके मुख में गुरुमंत्र है, उसके सब कर्म सिद्ध होते हैं, दूसरे के नहीं । दीक्षा के कारण शिष्य के सर्व कार्य सिद्ध हो जाते हैं ।'

**गुरुलाभात् सर्वलाभो ।**

व्यावहारिक लाभ तो नेता से मिलने पर भी हो जाएगा और नेता को जनता की चौकड़ी मिलेगी तब भी हो जाएगा। ये सब व्यावहारिक लाभ हैं, नश्वर लाभ हैं, तुच्छ लाभ हैं, परम लाभ नहीं । धन मिल गया, सत्ता मिल गई, स्वास्थ्यलाभ मिल गया, सिद्धियाँ मिल गई- ये सब तुच्छ लाभ हैं, मरनेवाले लाभ हैं, मिटनेवाले लाभ हैं । ये लाभ कितने भी हो जाएँ फिर भी इन्सान कंगाल का कंगाल ही रहेगा । करोड़ों रूपये मिल जाएँ फिर भी हृदय में इच्छाएँ, वासनाएँ और कोई दु:ख रहा तो मरते समय आदमी कंगाल हो जाता है । मात्र एक ही लाभ ऐसा है जो परम लाभ है, जिससे बढ़कर अन्य कोई लाभ नहीं है ।

**आत्मलाभात् परं लाभं न विद्यते ।** आत्मलाभ से बढ़कर कोई लाभ ही नहीं है । **आत्मसुखात् परं सुखं न विद्यते ।** आत्मसुख से बढ़कर कोई सुख नहीं है । **आत्मज्ञानात् परं ज्ञानं न विद्यते ।** आत्मज्ञान से बढ़कर कोई ज्ञान नहीं है ।

ऐसा ज्ञान गुरुओं के सान्निध्य से, गुरुओं की कृपा-चिंगारी से आरंभ होता है और साधक की साधना की फूंक चलती रहे तो वह भभकती हुई ज्ञानाग्नि जन्म-जन्मान्तर के अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश- इन पंचक्लेशों को जला देती है ।

अविद्या अर्थात् हमारे और ईश्वर के बीच नासमझी और अज्ञान का जो पर्दा है उसे अविद्या कहते हैं । ईश्वर अमर है, शाश्वत है, सुखस्वरूप, आनंदस्वरूप व ज्ञानस्वरूप है । उसे कोई कर्त्तव्य नहीं है जबकि हमें दुनियाभर के कर्त्तव्य सिर पर चढ़ाने पड़ते हैं, दुनियाभर के दु:ख और तनाव सहने पड़ते हैं । हम हैं तो ईश्वर की जात के और परेशान हो रहे हैं । ईश्वर की जात और तुम्हारी जात एक ही है लेकिन अभागी अविद्या ने तुम्हें ईश्वर की जात से दूर कर हाड़-माँस की जात का बना दिया है ।

*हे जीव ! तेरे दु:ख और क्लेश सदा के लिये तब तक नहीं मिटेंगे, जब तक कि तू गुरुओं के अनुभव को अपना अनुभव नहीं बनाएगा, प्रभु के अनुभव को अपना अनुभव नहीं बनाएगा और प्रभु की जात को अपनी जात नहीं मानेगा ।*

इस शरीर में रखा भी क्या है ? दो सीधी हड्डियाँ, कुछ आड़ी हड्डियाँ, बीच में माँस है, मल है, मूत्र है, थूक है, मज्जा है और चमड़े के कवर से ढका है । क्या यह तुम्हारी जात है ? तुम ये हो ? इस शरीर से कुछ भी निकालो तो तुम्हें प्यारा लगेगा ? नाक से लीथ निकलती है, आँख से कीचड़ निकलता है, कान से मैल निकलता है, त्वचा से पसीना निकलता है और नीचे के अंगों से मल-मूत्र निकलता है । इनमें से तुम्हें क्या प्यारा लगता है ? कुछ भी नहीं ? ...तो स्पष्ट है कि जो आत्मा-परमात्मा है, वही तुम्हारी जात है ।

**सो क्यूं बिसर्या जिन सब कुछ दिया ।**
**सो क्यूं बिसर्या जिन सब कुछ किया ॥**

हे जीव ! तेरे दु:ख और क्लेश सदा के लिये तब तक नहीं मिटेंगे, जब तक कि तू गुरुओं के अनुभव को अपना अनुभव नहीं बनाएगा, प्रभु के अनुभव को अपना अनुभव नहीं बनाएगा और प्रभु की जात को अपनी जात नहीं मानेगा । वास्तव में तुम्हारी जात आत्मा की जात है, परमात्मा की जात है, देवत्व की जात है, जो इस हाड़-मांस के शरीर में चेतना दे रहा है, ताजगी दे रहा है, ज्ञान दे रहा है, माधुर्य दे रहा है । लेकिन उल्टा अभ्यास पड़ गया है हाड़-मांस के शरीर को 'मैं' मानने का । कई जन्मों के कचरे का ढेर लगा है, कई जन्मों का अंधकार छुपा है अत: श्रद्धा का दीया ले जाओ, उसमें भक्ति का घी, तेल डालो, तत्परता व दृढ़ता की बाती बनाओ और गुरुकृपा-रूपी दीयासलाई से आत्मज्ञान की वह ज्योत प्रकट

कर लो कि सारा ही अंधकार लुप्त हो जाए ।

जिस शरीर का कोई भरोसा नहीं और एक झटका लगे तो सारे संबंध 'धड़ाक धूम...' हो जाते हैं, उन संबंधों के पीछे जिन्दगी खत्म कर रहे हो और जिस परमात्मा का संबंध कभी नहीं टूट सकता है, मौत का बाप भी जिसे नहीं तोड़ सकता है उस परमात्मा के संबंध को जतानेवाले सत्संग एवं साधन की ओर मन नहीं जाता, यह उल्टा स्वभाव है ।

तुलसीदासजी कहते हैं :

**सुनहु उमा ते लोभ अभागी ।**
**हरि तजि होवहिं विषय अनुरागी ॥**

भगवान के उस आत्मपद में, आत्मसुख में, आत्मज्ञान में रुचि और संसार की इस आपाधापी से वैराग्य हुआ तब तो समझ लो कि सद्भाग्य हुआ, नहीं तो दुर्भाग्य चालू है ।

तीन चीजों को जितना बढ़ाओगे, बढ़ती जाएगी और जितनी घटाओगे, घटती जाएगी । भोग-वासना को जितना बढ़ाओगे, बढ़ती जाएगी । व्यापार-व्यवसाय को जितना बढ़ाओगे, बढ़ता जाएगा और नींद को जितना बढ़ाओगे, बढ़ती जाएगी तथा जितना नियंत्रित करोगे, उतनी ही नियंत्रित होगी । संग्रह की भी सीमा होनी चाहिये, नींद की भी सीमा होनी चाहिये व फालतू समय बर्बाद करने की भी सीमा होनी चाहिये ।

छः घंटे सोने में, आठ घंटे कमाने में खर्च करने के बाद भी दस घंटे शेष रहते हैं । इनमें से मात्र चार घंटे ही तुम आत्मा-परमात्मा की प्राप्ति का असली अभ्यास करो तो ईश्वरत्व को जगाकर प्राप्त कर सकते हो ।

हे मानव ! जिन्दगी के दिन बीतते जा रहे हैं, पल-पल, प्रतिपल आयुष्य क्षीण हो रही है । न जाने कब मौत आकर गला दबोच लेगी ।

**जिन्दगी का क्या है भरोसा ।**
**कब निकल जाए प्राण किसीका ॥**

मौत आकर गला दबोच ले उसके पहले उस अमर आत्मा-परमात्मा का दीदार कर ले तो कितना अच्छा होगा ?

मिल जाएँ आत्ममस्ती में रमण करनेवाले कोई महापुरुष तो उनके चरणों में अपना अहं अर्पण कर देना । वे तुम्हें उस शाश्वत सनातन सत्य का साक्षात्कार करा देंगे ।

*मिल जाएँ आत्ममस्ती में रमण करनेवाले कोई महापुरुष तो उनके चरणों में अपना अहं अर्पण कर देना । वे तुम्हें उस शाश्वत सनातन सत्य का साक्षात्कार करा देंगे ।*

ॐ आनन्द... ॐ शांति... ॐ आनन्द...

---

(पृष्ठ ३ का शेष)

है ? उसकी हिंसा, उसका स्वार्थ ही उसे खा रहा है, डरा रहा है, खोखला कर रहा है । यह असत् बुद्धि है । वेद कहता है :

**सर्वसद्बुद्धिमाप्नोतु ।**

हम सबको सद्बुद्धि प्राप्त हो । भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : 'जो प्रीतिपूर्वक मेरा भजन करता है, उसे मैं बुद्धियोग देता हूँ ।'

भगवान बुद्धि तो सबको देते हैं लेकिन भगवान के नाते जो सत्कर्म करता है, सेवाकार्य करता है, जप-ध्यान करता है और बदले में नश्वर नहीं चाहते हुए भगवान से केवल प्रेम करता है, प्रीतिपूर्वक भजता है, उसको भगवान बुद्धियोग देते हैं । करोड़ों लोग बुद्धू हैं, करोड़ों लोग बुद्धिमान हैं । लाखों लोग बुद्धिजीवी हैं । श्रीकृष्ण इस बात पर राजी नहीं होते कि आप केवल बुद्धिमान हो जाओ, केवल बुद्धिजीवी हो जाओ । यह कोई बड़ी बात नहीं है । बुद्धू से बुद्धिमान ठीक है और बुद्धिमान से बुद्धिजीवी ठीक है लेकिन बुद्धिजीवी शारीरिक सुविधाओं में ही बुद्धि बेचकर जी रहा है । शारीरिक सुविधाओं के पार भी कुछ है और वह है बुद्धिदाता परमात्मा । यदि वहाँ बुद्धि नहीं लगी तो कर्म हो सकता है, कर्मयोग नहीं । जो भगवान से प्रीति करता है उसका हर कर्म कर्मयोग बन जाता है । अतः आप भी उस प्यारे के प्रति प्रीति करते हुए अपने कार्यों का सम्पादन कीजिये, फिर आपका हर कार्य कर्मयोग बन जाएगा ।

# प्रेम का महत्त्व

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

कबीरजी ने कहा है :

जा घट प्रेम न संचरे, सो घट जान मसान ।
जैसे खाल लुहार की, सांस लेती बिन प्रान ॥

नानकजी भी कहते हैं :

सांची कहूँ सुन लेहु,
जिन प्रेम किये
तिन ही प्रभु पायो ॥

जिसने प्रेम किया, उसीने पिया को, प्रभु को पाया । अकड़ या कायदे-कानून से नहीं कि 'मैं इतनी माला घुमाऊँगा तो तू आयेगा... मैं इतने यज्ञ करूँगा तब तू मिलेगा...' नहीं । 'मुझमें कुछ करने का सामर्थ्य है ही कहाँ ? जो भी तू करवाता है, वह तेरी ही कृपा है । बस, मैं तेरा हूँ... तू मेरा है और मैंने तुझे कहीं देखा है ।' ऐसा करते-करते उसके साथ दिल मिलाते जाओ, बस... संसार के तनाव छू हो जाएँगे, रोग-चिन्ता-मोह का प्रभाव क्षीण होता जाएगा, मुसीबतें भागना शुरू हो जाएँगी ।

प्रेम जब इष्टदेव से होता है तो उस देव के दैवी गुण प्रेमी में आने लगते हैं । आप किसी दुष्ट व्यक्ति से प्रेम करते हैं तो उसके अवगुण आपमें आने लगते हैं, सज्जन से प्रेम करते हैं तो उसके सद्गुण आने लगते हैं । वही प्रेम जब आप परमात्मा से करोगे तो आपमें कितने उच्च सद्गुणों का समावेश होगा, यह आप ही सोचो भैया !

...और वही प्रेम यदि परमात्मा को पाये हुए किसी ब्रह्मज्ञानी महापुरुष से होगा तो हमारा जीवन निहाल हो जाएगा । प्रेम का आशय आप कहीं फिल्मोंवाला प्रेम न समझ लेना । फिल्मोंवाले तो प्रेम को बदनाम करते हैं, काम विकार है वह । सच्चा प्रेम तो सद्गुरु के चरणों में सत्शिष्य का होता है, भक्त का भगवान में होता है ।

प्रेम तो एक एहसास है प्यारे ।
कभी न बुझती प्यास है प्यारे ॥
प्रेम का कहीं कोई रंग नहीं है ।
प्रेम का कोई ढंग नहीं है ॥
आशिक पर मर मिटते हैं प्रेम करनेवाले ।
राह तकते रहते हैं राह तकनेवाले ॥

महापुरुषों के प्रति हृदयपूर्वक प्रेम हो जाता है तो हृदय पवित्र होने लगता है, उनके सद्गुण आने लगते हैं व दोष मिटने लगते हैं । अतः आप गुणनिधि ईश्वर से प्रेम किया करें ।

श्रीमद्भागवत के तीसरे स्कंध में कपिल मुनि माता देवहूति से कहते हैं :

प्रसंगमजरं पाशम्
आत्मनः कवयो विदुः ।
स एव साधुषु कृतो
मोक्षद्वारमपावृतम् ॥

'विवेकीजन संग या आसक्ति को ही आत्मा का अच्छेद्य बन्धन मानते हैं, किन्तु वही संग या आसक्ति जब संतों-महापुरुषों के प्रति हो जाती है तो मोक्ष का खुला द्वार बन जाती है ।'

(श्रीमद्भागवत : ३.२५.२०)

> *आप किसी दुष्ट व्यक्ति से प्रेम करते हैं तो उसके अवगुण आपमें आने लगते हैं, सज्जन से प्रेम करते हैं तो उसके सद्गुण आने लगते हैं, वही प्रेम जब आप परमात्मा से करोगे तो आपमें कितने उच्च सद्गुणों का समावेश होगा, यह आप ही सोचो भैया !*

> *सत्संग के नियमों का पालन करते हुए जो सत्संग सुनता है उसे पाप मिटाने के लिये तपस्या, व्रत, उपवास की आवश्यकता नहीं है ।*

गांधीजी कहते थे : 'तमाम सद्गुणों की शोभा है प्रेम । प्रेम से ही मानव मानव है अन्यथा कुछ भी नहीं । यदि उसमें शुद्ध प्रेम नहीं है तो वह दो पैरवाला पशु है ।''

पाश्चात्य जगत में बड़ा आदमी उसे मानते हैं जिसके पास अपने जहाज हैं, बंगले हैं, गाड़ियाँ हैं, करोड़ों डॉलर हैं लेकिन भारत में उसे बड़ा मानते हैं जिसके हृदय में परमात्मप्रेम है । जो लेता तो बहुत कम अथवा कुछ भी नहीं लेता है लेकिन देता बहुत है । राजा जनक अष्टावक्र को बड़ा मानते हैं और रामचन्द्रजी वशिष्ठजी को गुरु मानते हैं, बड़े मानते हैं । जिसके भी हृदय में आत्मिक प्रेम है, उसको भारत ने बड़ा माना है । शुकदेवजी के चरणों में राजा परीक्षित ने बैठकर परमात्मप्रेम का वह प्रसाद एवं परम निर्भयता प्राप्त की कि तक्षक काटने आ रहा है फिर भी मौत का भय नहीं । परीक्षित कहते हैं : ''मौत तो मरनेवाले शरीर को मारती है, मुझ अमर आत्मा का क्या बिगड़ता है ?''

*प्रेम जब शरीर में फँसता है तो 'सेक्स' बनता है, प्रेम जब धन में उलझता है तो 'लोभ' बनता है, प्रेम जब परिवार में मँडराता है तो 'मोह' बनता है और प्रेम जब ईश्वर में या ईश्वरप्राप्त महापुरुषों में लगता है तो मुक्तिदायी बनता है ।*

सच्ची सेवा क्या है ? केवल दुःख मिटाना सच्ची सेवा नहीं है, सुख बाँटना, प्रेम बाँटना ही सच्ची सेवा है । तुमने किसी दुःखी आदमी का फोड़ा ठीक कर दुःख मिटाया तो यह सेवा तो है लेकिन पक्की सेवा नहीं, क्योंकि फोड़ा ठीक होते ही वह शराब पियेगा या और भी कुछ करेगा लेकिन उसके जीवन में तुमने सत्संग का प्रेम दे दिया तो शराबवाले की शराब छूट जाएगी, रोगी को रोग में राहत मिलेगी क्योंकि उसे परमात्मा का प्रेम जो दान कर दिया है । जो लोग ऐसी सेवा करते हैं अथवा ऐसी सेवा के दैवी कार्य में भागीदार बनते हैं, वे हजारों-हजारों यज्ञों से भी बड़ा काम करते हैं ।

*फिल्मोंवाले तो प्रेम को बदनाम करते हैं, काम विकार है वह । सच्चा प्रेम तो सद्गुरु के चरणों में सत्‌शिष्य का होता है, भक्त का भगवान में होता है ।*

**हरि सम जग कछु वस्तु नहीं, प्रेम सम नहीं पंथ ।**
**सद्गुरु सम सज्जन नहीं, गीता सम नहीं ग्रंथ ॥**

...तो आज से ही पक्का कर लो कि हम उस प्यारे से प्यार करेंगे, मुहब्बत करेंगे ।

**मुहब्बत के जो बंदे होते हैं**
**वो कब फरियाद करते हैं ।**
**लबों पर मोहर खामोशी की**
**और दिलों में उसे याद करते हैं ॥**

प्रेम के बिना तपस्या रूखी, प्रेम के बिना धन रूखा, प्रेम के बिना तन रूखा और प्रेम के बिना जीवन भी रूखा होता है । प्रेम जब शरीर में फँसता है तो 'सेक्स' बनता है, प्रेम जब धन में उलझता है तो 'लोभ' बनता है, प्रेम जब परिवार में मँडराता है तो 'मोह' बनता है और प्रेम जब ईश्वर में या ईश्वरप्राप्त महापुरुषों में लगता है तो मुक्दिायी बनता है ।

भगवद्गीता के दसवें अध्याय के आठवें श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते ।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः ॥

'मैं संसार का प्रभव (मूल कारण) हूँ और मेरे से ही सारा संसार प्रवृत्त हो रहा है अर्थात् चेष्टा कर रहा है- ऐसा मेरे को मानकर मेरे में ही श्रद्धा-प्रेम रखते हुए बुद्धिमान् भक्त मेरा ही भजन करते हैं- सब प्रकार से मेरे ही शरण होते हैं ।' (गीता : १०.८)

कहते हैं कि सच्चे सत्संग में चलकर आदमी एक-एक कदम आता है तो उसका कर्मयोग होता है, एक-एक कदम पर उसे एक-एक यज्ञ का फल मिलता है । सत्संग में श्रद्धा-भक्ति से बैठने पर उसका भक्तियोग होता है तथा सत्संग में ज्ञान की वाणी,

(शेष पृष्ठ २४ पर)

# गीता-अमृत

यह धर्म का चिह्न नहीं है । धार्मिक व्यक्ति के, परम भक्त के लक्षणों को समझाने के लिए श्रीकृष्ण कहते हैं :

**अनपेक्षः शुचिर्दक्षः उदासीनो गतव्यथः ।**
**सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥**

'जो पुरुष आकांक्षा से रहित, बाहर-भीतर से शुद्ध, चतुर, पक्षपात् से रहित और दुःखों से छूटा हुआ है, वह सर्व आरम्भों का त्यागी मेरा भक्त मुझको प्रिय है ।'

(श्रीमद्भगवद्गीता : १२.१६)

मनुष्य की तुच्छ अपेक्षाएँ, इच्छाएँ ही उसको तुच्छ बना देती हैं और इन हल्की अपेक्षाओं को छोड़ने पर मनुष्य सम्राटों के सम्राट परमात्मा से स्वयं को जोड़ लेता है । भगवान कहते हैं : **'अनपेक्षः ।'** छोटी-छोटी अपेक्षाओं को कुचल डालो, नहीं तो तुम्हारा समय, तुम्हारी निगाहों की शक्ति, सुनने की शक्ति, वाणी की शक्ति, मनन-चिंतन की शक्ति अपेक्षाओं द्वारा छीन ली जाएगी । इसलिए तुच्छ अपेक्षाओं को, आकांक्षाओं को छोड़कर परमात्मा की मंजिल की तरफ कदम बढ़ाओ ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : अपेक्षाओं को त्यागकर **'शुचिर्दक्षः'** अर्थात् मन एवं कर्म से शुद्ध होकर दक्षतापूर्वक संसार में रहो । शुद्धि दो प्रकार की होती है : एक होती है बाह्य शुद्धि और दूसरी होती है आभ्यान्तर शुद्धि । नहाना, धोना, शरीर एवं घर को साफ रखना, यह बाह्य शुद्धि है । मन से दिव्य विचार करना, किसीका बुरा चिंतन न करना, किसीकी आलोचना न करना, किसीके प्रति बुरा भाव न रखना, यह आभ्यान्तर शुद्धि है ।

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

मानव ! तुझे नहीं याद क्या ?
तू ब्रह्म का ही अंश है ।
कुल गोत्र तेरा ब्रह्म है
सद्ब्रह्म तेरा वंश है ॥
संसार तेरा घर नहीं
दो चार दिन रहना यहाँ ।
कर याद अपने राज्य की
स्वराज्य निष्कंटक जहाँ ॥

हे मनुष्य ! अपने स्वराज्य की याद कर ।

जबसे धार्मिक लोगों ने अकुशलता को सिर पर सवार कर दिया तबसे हिन्दू धर्म की गरिमा दबती चली गई । आलसी, पलायनवादी, मूर्ख होकर ठगे जाना-

भक्त कैसा हो ? जिसने आकांक्षाओं का त्याग कर दिया हो, जो आन्तर एवं बाहर से शुद्ध हो, जिसका मन शुद्ध हो एवं दक्ष हो अर्थात् आन्तर एवं बाह्य क्रियाओं के प्रति सावधान हो ।

जिन कार्यों से मनुष्य का मन दुर्बल होता है, निराशा आती है ऐसे कार्यों को, ऐसे विचारों को विष की तरह त्याग दो और जिन विचारों से मन में उत्साह, शांति, प्रसन्नता आती हो ऐसे विचारों का मनन, स्मरण करके दक्ष हो जाओ । संसार के किसी उत्सव में जाओ तो दक्षता रखो । किस प्रकार का खाना, किस प्रकार बोलना इन सब बातों में सावधानी ही दक्षता है । जो मन में आया वह कर लिया, जैसे चाहा जीवन जी लिया तो फिर परमात्मरस पाने में कठिनाई हो जाएगी ।

इसीलिए भगवान कहते हैं : **अनपेक्षः शुचिर्दक्षः उदासीनो गतव्यथः ।** भक्त को हर सेवाकार्य में सावधान रहना चाहिए, अपेक्षाओं से रहित होना चाहिए, दुःख में दुःखी न होकर उसे ईश्वरीय प्रसाद समझकर परमात्मा का स्मरण करना चाहिए, उदासीन होना चाहिए । **'उदासीन'** अर्थात् कार्य के प्रति पलायनवादी या उत्साहहीन नहीं होना चाहिए बल्कि परमात्मपद में अपनी वृत्ति को आसीन करना चाहिए । 'उद्' परमात्मा का नाम है अतः उस ईश्वरीय आनंद में, परमात्मा में अपनी वृत्ति को स्थिर करो । काम, क्रोध, लोभ, मोह इन वृत्तियों से अपने-आपको सिकुड़कर परमात्मपद में शांत करो ।

*जिन कार्यों से मनुष्य का मन दुर्बल होता है, निराशा आती है ऐसे कार्यों को, ऐसे विचारों को विष की तरह त्याग दो और जिन विचारों से मन में उत्साह, शांति, प्रसन्नता आती हो ऐसे विचारों का मनन, स्मरण करके दक्ष हो जाओ ।*

**'गतव्यथः'** अर्थात् चित्त को व्यथित होने से बचाओ । मनुष्य का मन अपने से बड़े व्यक्ति को देखकर सिकुड़ता है और अपने से छोटे व्यक्ति को देखकर अहंकार करता है । इस प्रकार परिस्थिति को देखकर मन की स्थिति बदलती रहती है । मनुष्य दुःख में दुःखी एवं सुख में सुखी हो जाता है इसीलिए भगवान कहते हैं कि भक्त **'गतव्यथः'** होना चाहिए अर्थात् किसी भी परिस्थिति में व्यथित न होनेवाला होना चाहिए ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

''जो अपेक्षाओं का त्याग कर सकता है, मन शुद्ध करता है, सुख-दुःखादि द्वन्द्वों से विमुक्त है और व्यथित नहीं होता ऐसा मेरा भक्त मुझे अत्यंत प्रिय है ।''

इन सब गुणों के लिए मनुष्य को सत्संग का सेवन करना चाहिए । जीवन्मुक्त महात्माओं के सत्संग से अन्तर्यामी परमात्मा को निहारने की कला पा लेनी चाहिए । अंतःकरण में एक वृत्ति उठती है और दूसरी उठने को है, इन दोनों के बीच की वृत्ति को निहारने से, उस निःसंकल्पावस्था को निहारने से तेज एवं बल बढ़ेगा और मनुष्य में श्रेष्ठ भक्तों के गुणों का प्रादुर्भाव होने लगेगा ।

ॐ... ॐ... ॐ...

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

गंगातट पर स्थित देवपुरी नामक गाँव में पुरुषोत्तमदासजी महाराज नाम के एक बहुत उच्च कोटि के संत हो गये । उनका जन्म एक साधारण कुटुम्ब में हुआ था । बचपन में ही वे माता-पिता के सुख से वंचित हो गये थे । उनकी तीन-चार साल की उम्र में पिता चल बसे और छः साल की उम्र में माता भी चल बसी। बड़ी बहन ने उनको पाला-पोसा। बड़ी बहन भगवान की भक्त थी । वह सत्संग में जाती थी तब छोटे पुरुषोत्तम को भी साथ में ले जाती थी ।

*बचपन में जो संस्कार पड़ते हैं उनका प्रभाव गहरा होता है । अगर बचपन से ही सत्संग का रंग लग जाता है तो परमात्मा का प्रेम स्वाभाविक ही मिल जाता है ।*

बचपन में जो संस्कार पड़ते हैं उनका प्रभाव गहरा होता है । अगर बचपन से ही सत्संग का रंग लग जाता है तो परमात्मा का प्रेम स्वाभाविक ही मिल जाता है ।

बालक पुरुषोत्तम को बचपन से ही भक्ति का ऐसा रंग चढ़ा कि उन्हें और कुछ भी अच्छा नहीं लगता था। माँ-बाप तो चल बसे पर उन्हें परम माता-पिता परमेश्वर की शरण मिल गई । उनके मन को सब रस फीके

*कई ग्रंथ और पुस्तक धार्मिक होते हैं लेकिन धर्म जब अंदर से प्रकट होता है तब उसमें बड़ी मधुरता आ जाती है । धर्म वह है जिससे अपना और दूसरों का इ हलोक और परलोक में श्रेय हो, कल्याण हो ।*

लगने लगे । शृंगार, हास्य, करुण, वीर, शांत, रौद्र आदि नौ रस में से किसी भी रस में उनका मन नहीं लगता था और न जिह्वा का ही कोई रस (कटु, तीक्ष्ण, मधुर, कषाय, अम्ल आदि) अच्छा लगता था । समस्त रस उनके लिए फीके हो गये । चित्त में ऐसा रामरस प्रगट होने लगा । अब वे रामरस में सराबोर रहकर जीने लगे । छोटा-मोटा काम-धंधा या व्यापार जो कुछ करना होता था वह कर लेते थे पर भीतर से रामरस में डूबे रहते थे । इस प्रकार बारह वर्ष उनका चित्त रामरस से तृप्त होता रहा । फिर वे देहाध्यास से पार हो गये और बाहर का काम-धंधा छूट गया ।

**यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ।**
**आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥**

'जो मनुष्य आत्मा में ही प्रीतिवाला, आत्मा में ही तृप्त और आत्मा में ही संतुष्ट रहता है, उसे कुछ करना शेष नहीं रहता है ।'

(श्रीमद्भगवद्गीता : ३.१७)

जिसको आत्मप्रीति होती है उसके लिए संसार का कार्य, संसार का बोझा अपने-आप छूट जाता है। ऐसे ही संसार में रहकर जीवन जीनेवाले पुरुषोत्तम, पुरुषोत्तमदास महाराज हो गये ।

गंगातट पर आये हुए उस गाँव के लोगों को उनके व्यवहार की मधुरता और पावन सान्निध्य से इतने सुख-शांति और आनंद मिलने लगे कि धीरे-धीरे ज्यादा लोग उनके पास आने लगे। कभी रामायण कभी भागवत् कभी किसी महापुरुष का पुस्तक लेकर बैठते और लोग कथाश्रवण करते थे... जीवन में धन्यता का अनुभव करते थे ।

कई ग्रंथ और पुस्तक धार्मिक होते हैं लेकिन धर्म जब अंदर से प्रकट होता है तब उसमें बड़ी मधुरता आ जाती है । धर्म वह है जिससे अपना और दूसरों का इहलोक और परलोक में श्रेय हो, कल्याण हो । ऐसा धर्माचरण पुरुषोत्तमदासजी महाराज के व्यवहार और वाणी में था ।

धीरे-धीरे लोगों में उनकी ख्याति बढ़ती गई, उनके पास आनेवाले लोगों की संख्या बढ़ती गई । वे एक जाने-माने संत के रूप में प्रसिद्ध हुए । वे पाँच वर्ष तक लोकसंपर्क में रहे । अंत में उन्होंने जब देखा कि यह प्राण-पखेरु उड़नेवाला है तो उस समय उन्होंने प्राणायाम करके परमात्म-ध्यान किया और उनकी तालू में से प्राण-पखेरु निकलकर ईश्वर तत्त्व में समा गया । शाश्वत तत्त्व व्यापक परमात्मा में मिल गया और नश्वर पंचभूतों से बना शरीर पंचभूतों में मिल गया । इस तरह उन्होंने उत्तम रीति से जीवन बिताया ।

जो उत्तम रीति से अपना जीवन बिताता है वह उत्तम मनुष्य कहलाता है । उत्तम मनुष्य के विचार, व्यवहार और संग उत्तम होता है । अगर कोई काम करना होता है तो उत्तम मनुष्य पहले आगे-पीछे का विचार करके काम हाथ में लेता है और जब तक काम पूरा न हो तब तक उसे छोड़ता नहीं है । फिर भले हजार विघ्न आ जायें या प्राण भी चले जायें तो भी परवाह नहीं करता है । अंततोगत्वा वह उत्तम पद को पा लेता है ।

मध्यम मनुष्य वह है जो अच्छा काम हाथ में तो लेता है परन्तु थोड़ा विघ्न आये तो भाग खड़ा होता है, काम छोड़ देने के लिए तैयार हो जाता है । थोड़ा इधर थोड़ा उधर हिलता-डुलता रहता है । ध्यान-भजन-सत्संग अच्छा तो लगता है परन्तु पुरानी आदत होती है तो थोड़ा कुछ 'प्रॉब्लेम' आया कि ध्यान-भजन छोड़ दिया, सत्संग छोड़ दिया ।

*जो मनुष्य आत्मा में ही प्रीतिवाला, आत्मा में ही तृप्त और आत्मा में ही संतुष्ट रहता है, उसे कुछ करना शेष नहीं रहता है ।*

कनिष्ठ आदमी वह है जो अच्छे रास्ते पर चलता ही नहीं है, अच्छे कर्म करता ही नहीं है । उसका जीवन भी अधम होता है । अगर वह कोई अच्छा कर्म करता दिखे तो भी केवल दिखावे के लिए ही करता है । अगर वह सच्चे मन से, उत्साहपूर्वक सत्कर्म करने लग जाये तो वह भी उत्तम मनुष्य बन सकता है ।

आप भी यदि उत्तम जीवन बिताकर उत्तम पद को पाना चाहते हों तो उत्तम कर्म करें । उत्तम में उत्तम कर्म है भीतर के अंतर्यामी आत्मा से अपनी एकता की अनुभूति करना । आप व्यवहार में जो कर्म करते हो उस कर्म करने के पहले और कर्म करने के बाद आराम होता है । अगर कर्म करते वक्त भी पूरे उत्साह से कर्म करोगे तो आपके चित्त में राम का आराम उसी वक्त प्रगट हो जायेगा ।

*❀ जब भक्ति शुरू होती है तब भीतर का कल्मष दूर होने लगता है । दूसरे भक्तों का संग अच्छा लगता है । आहार-विहार बदलकर सात्त्विक हो जाता है । सद्‌गुण पनपने लगते हैं । व्यक्ति के चित्त में दिव्य चेतना का प्रभाव और आनन्द विकसित होने लगता है ।*

*❀ जो कम बोलता है, केवल जरूरी होता है उतना ही बोलता है उसकी वाणी में शक्ति आती है । जो व्यर्थ की बड़बड़ाहट करता है, दो लोग मिलें तो बोलने लग जाता है, मण्डली बनाकर बकवास करता रहता है वह अपनी सूक्ष्म शक्तियाँ क्षीण कर देता है । उसकी वाणी का कोई मूल्य नहीं रहता ।*

*❀ अपने जीवन में जो जड़ता है, गन्दी आदतें हैं या मोह-ममता है इसको छोड़ना है, आगे बढ़ना है । आगे नहीं बढ़ते हो तो जरूर चोट खाते हो । जो सावधानी से आगे नहीं बढ़ता है वह मारा जाता है, कुचला जाता है, उसे दुःख भोगना पड़ता है ।*

*('दैवी संपदा' पुस्तक से)*

**प्रश्न :** सद्गुरुशरण का माहात्म्य एवं सद्गुरु की वास्तविक सेवा कैसे करनी चाहिए, वह बताईए ।

**उत्तर :** इस विश्व में परम सत्य ब्रह्म है । उस ब्रह्म का उपदेश करके जो महापुरुष अपने शिष्य के भीतर छुपे हुए समस्त दु:खों के मूल कारण अज्ञान का नाश करते हैं उन्हें श्री सद्गुरु कहा जाता है । ऐसे समर्थ सद्गुरु की शरण लेने से तथा परम आदर से उनकी सेवा करने से शिष्य के हृदय की अशुद्धियाँ क्रमश: दूर होती हैं । अंत:करण पवित्र बनता है । परिणामस्वरूप उस शिष्य के हृदय में गुरुभक्ति प्रकट होती है । सद्गुरु का वास्तविक स्वरूप निरावरण ब्रह्म है । अत: समस्त दु:खों की निवृत्ति के लिए और परमानंद की प्राप्ति के लिए शिष्य को सद्गुरु की खूब भक्ति करनी चाहिए ।

सद्गुरु की वास्तविक सेवा उनके उपदेश एवं सिद्धान्तों के अनुसार जीवन बनाने से ही हो सकती है क्योंकि **'आज्ञा सम नहीं साहेब सेवा ।'**

**प्रश्न :** उत्तम श्रद्धा किसे कहते हैं ?

**उत्तर :** सद्गुरु एवं सत्शास्त्र के उपदेश पर संशय-रहित विश्वास को उत्तम श्रद्धा कहा गया है । ऐसी उत्तम श्रद्धावाला सद्भागी व्यक्ति ही परमात्मा की अनन्य भक्ति प्राप्त कर सकता है । अनेक पुण्यसंस्कारों के परिपक्व हुए बिना मनुष्य के हृदय में ऐसी श्रद्धा का उदय नहीं होता । अत: विवेकी पुरुषों को पापी विचारों एवं कर्मों से दूर रहकर, शुभ कर्मों में प्रीति रखकर, उनके उपदेश को आदरपूर्वक सुनकर अपने अंत:करण में श्रद्धा का उत्तरोत्तर विकास करने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए । श्रद्धा से रहित धार्मिक कार्य तथा साधन भी दंभरूप हो जाते हैं । अत: बारम्बार प्रभु से सुखदायिनी श्रद्धा के लिए प्रार्थना करनी चाहिए ।

**प्रश्न :** मंत्रसिद्धि हेतु अनुष्ठान करनेवाले साधक को किन-किन नियमों का पालन करना चाहिए ?

**उत्तर :** मंत्रसिद्धि हेतु साधक को अनुष्ठान के दिनों में बारह नियमों का पालन करना चाहिए जो क्रमश: निम्नानुसार हैं :

**(१) भूमिशयन :** अनुष्ठान के दिनों में साधक को शयन के लिए पलंग का त्याग करके भूमि पर बिस्तर बिछाकर सोना चाहिए । बिस्तर पर गर्म शाल या कंबल बिछायें ताकि जमीन का अर्थिंग न मिले ।

**(२) ब्रह्मचर्य :** ब्रह्मचर्य के पालन के लिए गरम मसालों का त्याग करके साधक को अल्पाहार या फलाहार करना चाहिए । रात्रि के भोजन में दूध का उपयोग न करें ।

**(३) मौन :** अनुष्ठान के दौरान साधक को मौन रहना चाहिए क्योंकि मौन न रखने से बातचीत में समय अधिक चला जाता है और नियमानुसार जप नहीं हो पाता ।

**(४) गुरुसेवा :** मात्र अन्न-वस्त्र अर्पण करने से ही गुरुसेवा नहीं होती परंतु शिष्य का जीवन और उन्नति देखकर गुरु को जो प्रसन्नता होती है वही वास्तविक गुरुसेवा है । सद्गुरु के उपदेशानुसार आचरण करने से गुरुकृपा अपने-आप ही शिष्य के हृदय में बहने लगती है । इसीलिए कहा गया है : गुरुकृपा ही केवलं शिष्यस्य परं मंगलम् ।

**(५) त्रिकाल स्नान :** अनुष्ठान के दिनों में त्रिकाल संध्या के पूर्व स्नान करना चाहिए । त्रिकाल संध्या में प्राणायाम भी करें ।

**(६) पापकर्म एवं पापचेष्टाओं का परित्याग :** सूक्ष्म जंतुओं की भी हिंसा न हो जाये, इसका ध्यान रखें । दूसरों का दिल दुखता हो, ऐसी चेष्टाएँ भी न करें ।

**(७) नित्यपूजा :** अपने सद्गुरुदेव या इष्टदेव की नित्य पूजा-अर्चना करें ।

**(८) नित्यदान :** अपनी योग्यता के अनुसार प्रतिदिन कुछ न कुछ दान करना चाहिए । दान धन से ही

हो सकता है ऐसा न मानें । जिनके पास धन नहीं है वे शरीर द्वारा सेवा करके श्रमदान भी कर सकते हैं ।

**(९) प्रार्थना :** नित्य परमात्मा की स्तुति, स्तोत्रपाठ, कीर्तनादि करना चाहिए ।

**(१०) नैमित्तिक पूजा :** अनुष्ठान के दिनों में यदि नैमित्तिक पर्व आ जायें तो उस दिन आरंभिक साधकों को विशेष पूजन करना चाहिए जैसे कि शिवरात्रि हो तो शिवपूजन, जन्माष्टमी हो तो कृष्णपूजन। ब्रह्मज्ञानी गुरु मिल गये हों एवं ब्रह्मविचार का मार्ग खुल गया हो तो वह स्वतंत्र है ।

**(११) गुरुनिष्ठा :** जिन श्रीसद्गुरुदेव से मंत्रदीक्षा मिली हो उनके श्रीचरणों में पूर्ण समर्पण एवं उनके वचनों में पूर्ण विश्वास होना चाहिए। **मंत्रमूलं गुरोर्वाक्यं... ।**

**(१२) मंत्रनिष्ठा :** श्रीसद्गुरु के दिये हुए मंत्र में पूर्ण श्रद्धा होनी चाहिए । मंत्रनिष्ठा हेतु साधक का ऐसा दृढ़ निश्चय होना चाहिए कि 'दीक्षा के समय श्री सद्गुरुदेव ने मुझे जो मंत्र दिया है उसीसे मेरा परम कल्याण होगा ।' इस निश्चय के साथ मंत्रजाप किया जाये तो अवश्य मंत्रसिद्धि मिलेगी । **'मंत्रजाप मम दृढ़ बिस्वासा ।'**

**प्रश्न :** सर्वोत्तम वैराग्य कौन-सा है ?

**उत्तर :** 'सर्व दृश्य विकारी और विनाशी हैं । हिरण्यगर्भ का ऐश्वर्य भी विकारी और विनाशी है । यहाँ परब्रह्म परमात्मा के सिवाय कुछ भी अविकारी और अविनाशी नहीं है' ऐसी विवेकदृष्टि रखकर, हृदय की ओर से उदासीन रहकर परमात्म-परायण रहना उसे सर्वोत्तम वैराग्य कहा गया है । जो मनुष्य अपना परम कल्याण करना चाहता है उसे आदरपूर्वक सत्संग का श्रवण करना चाहिए, उपदेशानुसार मनन करना चाहिए और गुरुदेव के द्वारा बताई गई युक्तियों से एकांत में बैठकर प्रीतिपूर्वक ब्रह्मध्यान करना चाहिए । जो इस प्रकार का आचरण न करते हुए व्यर्थ की लौकिक या शास्त्रीय खटपटों में ही अपना समय व्यतीत करते हैं वे अपने दोनों लौक बिगाड़ते हैं । अतः साधक को खूब सावधानीपूर्वक अपने अमूल्य समय का सदुपयोग करना चाहिए ।

**प्रश्न :** वाणी के संयम के लिए साधक को कौन-सा उपाय करना चाहिए ?

**उत्तर :** वाणी के देवता अग्निदेव बहुत तीक्ष्ण स्वभाववाले हैं जिसकी वजह से वाणी बहुत ही बाह्यवेगवाली होती है अर्थात् उसका निरर्थक वेग बहुत रहता है । शब्द बोलने से पूर्व बोलनेवाले का वाणी पर स्वामीत्व होता है किन्तु बोलने के बाद बोलनेवाला कहे गये शब्दों का दास बन जाता है । वाणी का संयम न रख पाने के कारण इस पृथ्वी पर हुए अनेक अनर्थों का वर्णन ग्रंथों में आता है । निरर्थक बोलते रहने से वाणी का प्रभाव क्षीण हो जाता है । जो अधिक बोलता है वह झूठ भी अधिक बोलता है । अतः अपनी वाणी के संयम के लिए साधक को दिन में कुछ समय तक मौन रहने का अभ्यास करना चाहिए । कहा भी गया है : 'न बोलने में नौ गुण होते हैं ।'

**प्रश्न :** दुनिया की अन्य संस्कृतियों की अपेक्षा अपने हिन्दू धर्म में इतने अधिक उत्सव क्यों आते हैं और पर्व उत्सवादि का हमारे मानस पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

**उत्तर :** आज के वैज्ञानिक कहते हैं कि मनुष्य जब एक ही प्रकार का काम करता रहता है तब उसकी प्रसन्नता और उसका बौद्धिक विकास रुक जाता है । वैज्ञानिकों ने तो अब साबित किया किन्तु भारत के मंत्रदृष्टा ऋषियों ने तो हजारों वर्ष पूर्व मनुष्य की मानसिक बीमारी को जान लिया कि यदि मनुष्य एक ही प्रकार का धर्म-कर्म करता रहेगा तो ऊब जायेगा और उसका बौद्धिक विकास रुक जायेगा। अतः ऋषियों ने तन स्वस्थ हो, मन प्रसन्न हो एवं नित्य नवीन सात्त्विक आनंद की प्राप्ति हो इस हेतु से उत्सवों की व्यवस्था की होगी ।

उत्सव के दिनों में मनुष्य प्रकारांतर से धर्म-कर्म में भाग लेता है, महापुरुषों के दर्शन करता है, उनकी सेवा करता है, सत्संग का श्रवण करता है, मंदिरों तथा उत्तम वातावरण में जाता है । उत्सव के दिन नजदीक आने पर मनुष्य के अंतःकरण में आनंद एवं स्फूर्ति आने लगती है, सज्जनों के शुभ विचारों के

...साह द्वारा अंत:करण पर होती शुभ असर का अनुभव करता है और उत्सव की समाप्ति के पश्चात् अपने अंत:करण की ग्रहण एवं धारण शक्ति के विकसित होने का अनुभव करता है । इन्हीं कारणों से हिन्दू धर्म में आनेवाले पर्व तथा उत्सव मनुष्य के मानस में आनंद, उत्साह एवं प्रसन्नता की वृद्धि करते हैं तथा आत्मोन्नति करने में मदद करते हैं ।

**प्रश्न :** महाभारत में प्रमाद को ही मृत्यु क्यों कहा गया है ?

**उत्तर :** प्रमाद ही मनुष्य को अपने कल्याणस्वरूप की विस्मृति करवाकर बारम्बार जन्म-मृत्यु के चक्कर में भटकाता रहता है एवं अनेक प्रकार के दु:खों का अनुभव करवाता है । जहाँ प्रमादरूपी दुर्गुण है वहाँ ज्ञान, भक्ति एवं योग की प्राप्ति नहीं होती । प्रमाद मनुष्य का बहुत-सा समय निरर्थक बना देता है । इसी कारण से प्रमाद को मृत्यु कहा गया है । विवेकी साधक-साधिकाओं को अपने व्यवहार के किसी भी छोटे-बड़े काम में प्रमाद नहीं करना चाहिए किन्तु उत्साह एवं प्रसन्नता से कार्य करना चाहिए । आत्मज्ञान, आत्मानुभव में कतई प्रमाद न करें ।

---

# प्रभु ! परम प्रकाश की ओर ले चल...

हजरत मुहम्मद को एक बार ऐसा पता लगा कि उनके पास आनेवाले एक व्यक्ति को निन्दा करने की बड़ी आदत है । उन्होंने उस व्यक्ति को अपने पास बुलाकर नरम पँखों से बनाए गए एक तकिए को देते हुए कहा कि ये पँख तुम घर-घर में फेंक आओ । उस व्यक्ति को कुछ पता न चला कि यह सब क्या हो रहा है । वह बड़े उत्साह से चल पड़ा । उसने प्रत्येक घर में एक-एक पँख रखते हुए किसी न किसी की निन्दा भी की ।

दूसरे दिन शाम को पैगम्बर ने उसे पास बुलाकर कहा : ''अब तू पुन: जा और सारे पँखों को वापस ले आ ।''

''यह अब कैसे हो सकेगा ? सारे पँख न जाने कहाँ उड़कर चले गए होंगे ?''

''इसी प्रकार तू जो जगह-जगह जाकर गैर जिम्मेदार बातें करता है, वे भी वापस नहीं आ सकती । वे भी इधर-उधर उड़ जाती हैं । उससे तुझे कुछ मिलता नहीं बल्कि तेरी जीवनशक्ति का ही ह्रास होता है और सुननेवालों की भी तबाही होती है ।''

संत तुलसीदासजी ने कितना स्पष्ट लिखा है !

**हरि गुरु निन्दा सुनहिं जे काना**<br>
**होहिं पाप गौ घात समाना ।**<br>
**हरि गुरु निन्दक दादुर होई**<br>
**जन्म सहस्र पाव तन सोई ॥**

यदि निन्दा में रुचि लेनेवाला व्यक्ति इतना समझ जाए कि निन्दा क्या है तो कितना अच्छा हो ! किन्तु यदि वह इसे समझना ही न चाहे तो क्या किया जा सकता है ?

एक सज्जन ने कहा : ''सत्य की तुलना में असत्य बिल्कुल निर्बल होता है । फिर भी वह इतनी जल्दी क्यों फैल जाता है ?''

''इसका कारण यह है कि सत्य जब तक अपना जूता पहनता है, तब तक असत्य सारी पृथ्वी का चक्कर लगा आता है ।''

सत्य में अस्पष्ट जैसा कुछ होता ही नहीं । इसमें तो सब कुछ स्पष्ट ही होता है । अस्पष्ट वाणी बोलनेवाला स्वयं ही अस्पष्ट बन जाता है । उसके मन पर जो कुहरा छाया रहता है, उसका धुँधलापन वह दूसरों के मन पर भी पोत देता है । उसमें मूल सत्य तो तटस्थ ही रहता है । असत्य अपने हजारों रंग दिखाता रहता है ।

स्वामी दयानन्द जिस प्रकार जीर्ण-शीर्ण परम्पराओं और स्थापित हितों का विरोध करते थे उसे देखकर अनेक दकियानूसों को मन में चुभन होती थी । उन लोगों ने दयानन्दजी की तेजस्विता घटाने के लिए तरह-तरह के प्रयत्न किए । इसी प्रकार के एक बेवकूफी भरे प्रयास में उनको जहर देकर मार डाला गया ।

स्वामीजी के बारे में स्वामी श्रद्धानन्द ने कहा : ''जो अधकचरे व्यक्ति चरित्रभ्रष्ट थे, वे भला इस शुद्ध सोने को कैसे पहचान सकते ? जिसमें सार-असार को पहचानने की शक्ति नहीं, वे चरित्र कहाँ से गढ़ सकते हैं ? ऐसे सत्त्व को पहचानने के लिए भी तो अपने में सत्त्व होना चाहिए ।''

# हेमंत और शिशिर की ऋतुचर्या

शीतकाल में मनुष्य को प्राकृतिक रूप से ही उत्तम बल प्राप्त होता है । प्राकृतिक रूप से बलवान बने मनुष्यों की जठराग्नि, ठंडी के कारण शरीर के छिद्रों के संकुचित हो जाने से जठर में सुरक्षित रहती है फलस्वरूप अधिक प्रबल हो जाती है । यह प्रबल हुई जठराग्नि ठंड के कारण उत्पन्न वायु से और अधिक भड़क उठती है । इस भभकती अग्नि को यदि आहाररूपी ईंधन कम पड़े तो वह शरीर की धातुओं को जला देती है । अत: शीतऋतु में खारे, खट्टे और मीठे पदार्थ खाने-पीने चाहिए । इस ऋतु में शरीर को बलवान बनाने के लिए पौष्टिक, शक्तिवर्धक और गुणकारी व्यंजनों का सेवन करना चाहिए ।

इस ऋतु में घी, तेल, गेहूँ, उड़द, गन्ना, दूध, सौंठ, पीपर, आँवले वगैरह में से बने स्वादिष्ट पौष्टिक व्यंजनों का सेवन करना चाहिए । यदि इस ऋतु में जठराग्नि के अनुसार आहार न लिया जाये तो वायु के प्रकोपजन्य रोगों के होने की संभावना रहती है । जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी न हो उन्हें रात्रि को भिगोये हुए देशी चने सुबह में नाश्ते के रूप में खूब चबा-चबाकर खाना चाहिए । जो शारीरिक परिश्रम अधिक करते हैं उन्हें केले, आँवले का मुरब्बा, तिल एवं गुड़, नारियल, खजूर आदि का सेवन करना अत्यधिक लाभदायक है ।

एक बात विशेष ध्यान में रखने जैसी है कि इस ऋतु में रातें लंबी और ठण्डी होती हैं । अत: केवल इसी ऋतु में आयुर्वेद के ग्रंथों में सुबह नाश्ता करने के लिए कहा गया है, अन्य ऋतुओं में नहीं ।

अधिक जहरीली (अंग्रेजी) दवाओं के सेवन से जिनका शरीर दुर्बल हो गया हो, उनके लिए भी विभिन्न औषधि प्रयोग जैसे कि अभयामलकी रसायन, वर्धमान पिप्पली प्रयोग, भल्लातक रसायन, शिलाजित रसायन, त्रिफला रसायन, चित्रक रसायन, लहसून के प्रयोग किये जा सकते हैं ।

जिन्हें कब्जियत की तकलीफ हो उन्हें सुबह खाली पेट हरड़े एवं गुड़ अथवा यष्टिमधु एवं त्रिफला का सेवन करना चाहिए । यदि शरीर में पित्त हो तो पहले कटुकी चूर्ण एवं मिश्री लेकर उसे निकाल दें । सुदर्शन चूर्ण अथवा गोली थोड़े दिन खायें ।

*विहार :* आहार के साथ विहार एवं रहन-सहन में भी सावधानी रखना आवश्यक है । इस ऋतु में शरीर को बलवान बनाने के लिए तेल की मालिश करनी चाहिए । चने के आटे, लोध्र अथवा आँवले के उबटन का प्रयोग लाभकारी है । कसरत करना अर्थात् दंड-बैठक लगाना, कुश्ती करना, दौड़ना, तैरना आदि एवं प्राणायाम और योगासनों का अभ्यास करना चाहिए । सूर्यनमस्कार, सूर्यस्नान एवं धूप का सेवन इस ऋतु में लाभदायक है । शरीर पर अगर का लेप करें । सामान्य गर्म पानी से स्नान करें किन्तु सिर पर गर्म पानी न डालें । कितनी भी ठण्डी क्यों न हो, सुबह जल्दी उठकर स्नान कर लेना चाहिए । रात्रि में सोने से हमारे शरीर में जो अत्यधिक गर्मी उत्पन्न होती है वह स्नान करने से बाहर निकल जाती है जिससे शरीर में स्फूर्ति का संचार होता है ।

सुबह देर तक सोने से यही हानि होती है कि शरीर की बढ़ी हुई गर्मी सिर, आँखों, पेट, पित्ताशय, मूत्राशय, मलाशय, शुक्राशय आदि अंगों पर अपना खराब असर करती है जिससे अलग-अलग प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार सुबह जल्दी उठकर स्नान करने से इन अवयवों को रोगों से बचाकर स्वस्थ रखा जा सकता है ।

गर्म-ऊनी वस्त्र पर्याप्त मात्रा में पहनना, अत्यधिक ठंड से बचने हेतु रात्रि को गर्म कंबल ओढ़ना, रजाई आदि का उपयोग करना, गर्म कमरे में सोना, अलाव

...पना चाहिए ।

*अपथ्य :* इस ऋतु में अत्यधिक ठंड सहना, ठंडा पानी, ठंडी हवा, भूख सहना, उपवास करना, रूक्ष, कड़वे, कसैले, ठंडे एवं बासी पदार्थों का सेवन, दिवस की निद्रा, चित्त को काम, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष से व्याकुल रखना हानिकारक है ।

❀

## स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी

**प्रश्न :** मैं बहुत मोटा हो गया हूँ । कृपया उपाय बताईए ।

- रामकिशोर, नागोर (राज.)

**उत्तर :** एक गिलास कुनकुने पानी में आधे नींबू का रस, दस बूँद अदरक का रस एवं दस ग्राम शहद मिलाकर रोज सुबह नियमित रूप से पीने से मोटापे का नियंत्रण करना सहज हो जाता है ।

**प्रश्न :** मेरी बहन एवं जीजाजी को पथरी एवं सिर में दर्द है । कृपया इलाज बतायें ।

- कौशल किराना स्टोर, शहडोल (म.प्र.)

**उत्तर :** 'स्वास्थ्य सम्राट' एवं 'योगासन' में पथरी का इलाज दिया गया है ।

इसके अलावा दूसरा उपाय है : पानफूटी का रस, जौ का पानी, सहजने की छाल का काढ़ा, सहजने की फली का सूप पियें । पानी उबालकर ठंडा करके पियें ।

**प्रश्न :** मेरे दाँत क्षत-विक्षत अवस्था में हैं । डेन्टल सर्जन के पास तीन बार सफाई भी करवाई । मसूढ़े कटकर नाजुक व इतने सेन्सेटिव हो गये हैं कि हर समय मीठा दर्द रहता है और बोलने में दिक्कत होती है ।

- भैरव सेलावट, आमेट (राज.)

**उत्तर :** तिल के तेल से हाथ की ऊँगली से दिन में तीन बार दाँतों एवं मसूढ़ों की मसाज (मालिश) करें । ७ दिन बाद बड़ की दातौन को चबाकर मुलायम बनने पर घिसें । तिल के तेल का कुल्ला मुँह में भरकर जितनी देर रख सकें उतनी देर रखें । मुँह आँतों का आयना है अतः पेट की सफाई के लिए छोटी हरड़ चबाकर खायें ।

**प्रश्न :** मुझे जिस दिन कड़ा मल होता है उस दिन खून आता है एवं जलन होती है । मस्से नहीं हैं । इलाज बतायें ।

- रामनाथ अग्रवाल, आगरा (उ.प्र.)

**उत्तर :** आपको गुदविदार की तकलीफ होगी । आप जात्यादि तेल या मलहम को शौच जाने के बाद अंगुली से गुदा पर लगायें । ७ दिन में ही ठीक हो जायेगा । साथ में पाचन ठीक से हो ऐसा ही आहार लें । छोटी हरड़ चबाकर खायें ।

**प्रश्न :** मेरी भतीजी के मुँह से हमेशा लार निकलती रहती है जिससे वह जल्दी-जल्दी बोल नहीं पाती है । कृपया औषधि बताने का कष्ट करें ।

- प्रीति पाण्डेय, कानपुर (उ.प्र.)

**उत्तर :** कफ की अधिकता एवं पेट में कीड़े होने की वजह से मुँह से लार निकलती है । इसलिए दूध, दही, मीठी चीजें, केले, चीकू, आइसक्रीम, चॉकलेट आदि न खिलायें । अद्रक एवं तुलसी का रस पिलायें । वायविडंग का चूर्ण, कुबेराक्ष चूर्ण दें । पपीते के बीज के साथ 'संतकृपा चूर्ण' खिलायें ।

**प्रश्न :** मैं डयूओडिनल अल्सर (पेट की) बीमारी से पिछले ६-७ साल से पीड़ित हूँ । कई इलाज करवाये, पेट का ऑपरेशन भी करवाया किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ । कृपया उचित इलाज बतायें ।

**उत्तर :** एक माह तक केवल बकरी का दूध ही पियें । ताजा धारोष्ण दूध पी सकें तो बहुत अच्छा है । फिर भी न हो सके तो दूध गर्म करते समय उसमें दो चम्मच मुलहठी का चूर्ण एवं एक गिलास पानी डालें । पूरा पानी जल जाये तब तक उबालें । ऐसा दूध तीन बार पियें । प्रातःकाल १ चम्मच हरड़े का चूर्ण एवं सायंकाल १ चम्मच त्रिफला चूर्ण गर्म पानी के साथ लें ।

एक माह के बाद दूध-चावल की खीर खायें एवं शुद्ध घी का सेवन करें । डेढ़ माह बाद दूध-रोटी खायें । ३ माह बाद नमक-मिर्च बिना की सब्जी खायें एवं साढ़े तीन माह बाद सामान्य आहार लें ।

**प्रश्न :** मेरी माताजी की उम्र लगभग ४५ वर्ष

है । उनका ब्लडप्रेशर बहुत बढ़ जाता है । कितनी भी गोलियाँ खायें फिर भी १६०-१७० से कम होता ही नहीं । अत: उन्हें सिरदर्द, चक्कर आना, शरीर में कंपन होना आदि तकलीफें होती हैं और पूरे शरीर का संतुलन बिगड़ जाता है । कृपया उचित इलाज प्रकाशित करें ।

– चम्पालाल सोनी, सुमेरपुर (राज.)

**उत्तर :** वास्तव में ब्लडप्रेशर स्वतंत्र व्याधि नहीं है । सही निदान करवाकर दवाई लेने से अच्छा लाभ होगा । अभी उन्हें 'ॐ शांति' का जप करवायें । खाना खाने से पहले एवं पानी आदि पीने से पहले थोड़ी देर जप करके पानी आदि पियें या भोजन करें । 'ॐ शांति' का जप अधिक करें तो अच्छा है ।

बारहमासी के ११ पुष्प रोज खायें । १ ग्राम सर्पगंधा नामक बूटी को २ ग्राम बालछड़ नामक बूटी में मिलाकर दें । चन्द्रकला रस की २-२ गोली सुबह-शाम दें । दो चम्मच त्रिफला चूर्ण रात्रि को सोते समय दें । अगर वातप्रधान प्रकृति है तो प्रात: तिल का २० मिलिलीटर तेल गर्म पानी के साथ दें ।

*सूचना : 'स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी' के लिए बहुत सारे पत्र मिले हैं । प्रत्येक का एक साथ जवाब देना संभव नहीं है । कई प्रश्नों के उत्तर पूर्व अंक में दिये जा चुके हैं अत: पाठक कृपया उनमें इलाज देख लें ताकि पुनरावर्तन करना न पड़े ।*

'ऋषि प्रसाद' से भारत में परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू के सुप्रवचनों की बहती ज्ञानधारा के माध्यम से एक नई सामाजिक क्रांति का जन्म हो रहा है । धर्म का ह्रास समाज में जिस गति से हो रहा है ठीक उसके विपरीत संत श्री आसारामजी आश्रम व 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका के माध्यम से समाज में धर्म की स्थापना द्रुत गति से की जा रही है ।

आज संतश्री का आश्रम व यह पत्रिका भारत में लाखों लाखों लोगों का आध्यात्मिक मार्गदर्शन कर रही है इतना ही नहीं, विदेशों में भी अशांति की ज्वाला में धधकते हुए लोग भी इनके माध्यम से चिर शांति व ईश्वरीय आनन्द का अनुभव कर रहे हैं ।

मैं चाहूँगा कि समाज का हर वर्ग संत श्री आसारामजी आश्रम व 'ऋषि प्रसाद' का लाभ उठाकर भारत देश को महानता की ऊँचाइयों पर प्रतिष्ठित करे ।

– अमृतलाल मारु 'रवि'
पत्रकार – दसाई (म. प्र.)

*❀ साधक को ऐसा नहीं मानना चाहिए कि अमुक वस्तु, व्यक्ति, अवस्था या परिस्थिति के न मिलने के कारण साधना नहीं हो सकती है या उस व्यक्ति ने साधना में विघ्न डाल दिया । उसे तो यही मानना चाहिए कि कोई भी व्यक्ति साधना में विघ्न नहीं डाल सकता । भगवान तो विघ्न डालते नहीं, सब प्रकार से सहायता करते हैं और अन्य किसीकी सामर्थ्य नहीं है । अत: मेरी दुर्बलता ही विघ्न है । वास्तव में तो साधक का विश्वास और प्रेम ही साधना में रुचि और तत्परता उत्पन्न करता है । साधना के लिए बाह्य सहायता आवश्यक नहीं है ।*

*❀ चित्त में और व्यवहार में जितनी चंचलता होगी, अज्ञानियों के बीच घुसफुस होगी, बातचीत होगी उतना अज्ञान बढ़ेगा । जितनी आत्मचर्चा होगी, जितना त्याग होगा, दूसरों के दोष देखने के बजाय गुण देखने की प्रवृत्ति होगी उतना अपने जीवन का कल्याण होगा ।*

*('आत्म योग' पुस्तक से)*

# संस्था समाचार

**अहमदाबाद :** दीपावली एवं नूतनवर्ष का उत्सव पूज्यश्री की पावन निश्रा में हजारों-हजारों साधकों ने अहमदाबाद आश्रम में हर्षोल्लास के साथ मनाया । सूर्य ग्रहणकाल के दौरान व्यासभवन के चारों ओर पर्दे लगाकर हजारों-हजारों साधक पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में ध्यान की गहराइयों का रसास्वादन करते हुए पूरे समय तक मंत्रजाप इत्यादि साधन करते रहे । नूतनवर्ष के अवसर पर सूरज की उगती किरणों के साथ ही हजारों-हजारों कदम संतदर्शन के लिये साबरमती तट पर बसे इस सुरम्य आश्रम की ओर बढ़ते रहे और तकरीबन सूर्यास्त तक दर्शनार्थियों के आगमन का सिलसिला चलता रहा । जैसा कि हमारी पावन संस्कृति में यह प्रचलित है कि नूतनवर्ष के अवसर पर महापुरुषों के दर्शन और सत्कर्मों का आयोजन करना चाहिये, प्रतिवर्ष नूतनवर्ष के अवसर पर इन अलख पुरुष पूज्य बापू की नूरानी नजरों से बरसते दिव्यामृत को सिर आँखों पर धारण करने हजारों, लाखों भक्त, दूर देशों से भी चले आते हैं ।

**सिद्धपुर :** कर्दम-देवहूति व भगवान कपिल की तप:साधना व ज्ञानकथाओं से जुड़ी हुई गुजरात की यह भागवतीय नगरी सिद्धपुर एक बार पुन: परम श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ भगवदाचार्य पूज्य बापू के मुखारविन्द से प्रस्फूटित गीता-भागवत सत्संग की ज्ञानगंगा में दिनांक २९ अक्तूबर से २ नवम्बर १९९५ तक अवगाहन कर धन्य धन्य हो उठी । पूज्यश्री के करकमलों से यहीं सरस्वती नदी के तट पर संत श्री आसारामजी विश्रामगृह का एवं शहर में संत श्री आसारामजी सत्संग भवन का लोकार्पण हुआ । ज्ञातव्य है कि अपनी बाल्यावस्था में पूज्यश्री ने यहाँ भी कुछ वर्षों तक साधना की थी । एक चिरकालीन अन्तराल के बाद सिद्धपुर के आबालवृद्ध नर-नारी सभी ने अपने ही इन बालवैरागी से लाखों-लाखों भक्तों के उद्धारक बने सद्गुरु का तहेदिल से स्वागत किया । पूज्यश्री अपने निवास से प्रवचन स्थल की ओर तथा प्रवचन स्थल से निवास की ओर पधारते तो हर जाति, हर धर्म के लोग सड़क के दोनों ओर खड़े होकर पूज्यश्री का नित्य अभिवादन करते । पूज्य बापू भी अपने उदार हस्त से मुट्ठियाँ भर भरके उन्हें प्रसाद लुटाते जाते ।

**झाँसी :** वीरता, त्याग, शौर्य और प्रथम स्वातंत्र्य संग्राम में अपनी सर्वोपरि भूमिका निभानेवाली नगरी झाँसी के संबंध में ये दो पंक्तियाँ तो हर कोई गुनगुनाता है :

**बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी ।**
**खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥**

विगत तीन वर्षों से चल रहे लक्षचंडी महायज्ञ की पूर्णाहुति के निमित्त दिनांक ४ से ७ नवम्बर १९९५ तक यहाँ पूज्य बापूजी के पावन सान्निध्य में दिव्य ज्ञानयज्ञ का आयोजन हुआ । दिनांक ७ नवम्बर को लक्षचंडी महायज्ञ की पूर्णाहुति पूज्य बापूजी के पावन करकमलों से सम्पन्न हुई । पूज्यश्री के सत्संगामृत का रसपान करने के लिये उत्तर प्रदेश के महामहिम राज्यपाल श्री मोतीलाल वोरा विशेष वायुयान लेकर लखनऊ से झाँसी आये । पूज्यश्री के स्वागत में महामहिम ने कहा :

**''यह उत्तर प्रदेश का सौभाग्य है कि महान व्यक्तित्व के धनी महापुरुष संत श्री आसारामजी बापू का सान्निध्य झाँसी नगर को मिला है । आज भारत की संस्कृति पूज्य बापूजी जैसे संतों के कारण ही विश्वविख्यात है । पूज्य बापू बार--बार पधारकर उत्तर प्रदेश की जनता का तथा हमारा मार्गदर्शन करते रहें, यही प्रार्थना है ।''**

झाँसी में कार्यक्रम तो नगर से बाहर आयोजित था फिर भी पूज्यश्री की अमृतवाणी का श्रवण करने हेतु इतनी विशाल जनमेदनी उमड़ पड़ी कि सारे शहर के पांडाल लगा देने के बाद भी विशाल मंडप दूसरे ही दिन छोटा पड़ गया । दाँतों तले अंगुली दबाते हुए लोग बात कर रहे थे कि पूज्य बापू के सत्संग समारोह का आयोजन ही ऐसा है कि **न भूतो न भविष्यति ।**

**हैदराबाद :** आन्ध्र प्रदेश की राजधानी और अधिकांश तेलगुभाषी लोग... फिर भी दक्षिण भारत के इस प्रमुख नगर के बापूनगर स्थित प्रदर्शनी मैदान में दिनांक : ८ से १२ नवम्बर १९९५ तक पूज्य बापू के दिव्य

सुप्रवचनों का अति विराट आयोजन हुआ। पूज्य बापू की अमृतवाणी का आचमन करने उमड़े जनसैलाब के सम्मुख तो सत्संग आयोजनार्थ बनाया गया मंडप ही छोटा पड़ गया। पूर्णाहुति के दिवस तो दो-दो लाख श्रोता...! फिर भी सभी शांत और एकाग्र चित्त से पूज्य बापूजी द्वारा प्रवाहित ज्ञानगंगा में गोता लगाते रहे। हैदराबाद निवासियों के लिये पूज्यश्री के सत्संग का आयोजन एक वरदान बन गया। दिनांक १३ नवम्बर की प्रात: यहाँ के भक्तजनों ने पूज्य बापू से अति अनुनय-विनय कर आखिर हैदराबाद में आश्रम स्थापना के लिये भूमि-पूजन कार्य सम्पन्न करवा ही लिया। संत श्री आसारामजी आश्रम की ५१ वीं शाखा हैदराबाद में होगी।

**सोलापुर :** चादर निर्माण में विश्वविख्यात महाराष्ट्र का यह औद्योगिक नगर दिनांक : १५ से १९ नवम्बर ९५ तक पूज्य बापू के सुप्रवचन आयोजन से धन्य-धन्य हो उठा। होम मैदान के विशाल परिसर में विशाल मंडप में बैठे लाख लाख भक्तों का समुदाय पूज्यश्री के मुखारविन्द से प्रस्फुटित ज्ञानगंगा में अवगाहन कर नित्य नवीन आनंद की अनुभूति करता रहा। दिनांक १८ नवम्बर को शहर के १२,६३५ विद्यार्थियों ने पूज्य बापू से स्मरणशक्ति-विकास एवं प्रगति के विभिन्न आध्यात्मिक सोपानों का ज्ञान प्राप्त किया। उन्हें यादशक्ति बढ़ाने के प्रयोग भी सिखाये गये। शरीर मजबूत, मन प्रसन्न व स्मरणशक्ति बढ़ाने के प्रयोग भी करवाये। आश्चर्य तो यह है कि वे चंचल बालक ८ बजे से आना प्रारंभ हुए और १२ बजे तक अनुशासित होकर बैठे रहे। शिक्षक अभिभावक ऐसे दृश्य देखकर दंग रह जाते हैं। गजब है परमेश्वर की प्रेमाशक्ति ! इन बच्चों के शारीरिक, मानसिक व बौद्धिक बल के साथ संगठन बल की भी कला पर पूज्यश्री ने प्रकाश डाला। सेंथेटिक, चमकीले, भड़कीले फेशनेबल वस्त्रों से बचकर स्वास्थ्यप्रद सात्त्विक आभा निखर रही हो, ऐसे प्रभावशाली गणवेश पहनना चाहिये, चटोरापन से बचकर साहसी, स्वस्थ, सादगीपूर्ण जीवन यापन करना चाहिये इस बात पर भी पूज्यश्री ने प्रकाश डाला।

**औरंगाबाद (संभाजीनगर)** में सुसज्ज की गई अयोध्यापुरी में पूज्य गुरुदेव प्रात:स्मरणीय संत श्री आसारामजी बापू के दिव्य सुप्रवचनों का शुभारंभ पूज्य के परम्परागत स्वागत के साथ दिनांक : २२ नवम्बर को हुआ। दिनांक २६ नवम्बर तक चले इस सत्संग समारोह में ज्यों-ज्यों मंडप को विशाल आकृति प्रदान की जाती, सत्संग श्रवणार्थ नित्य उमड़ती जनमेदनी के सम्मुख मंडप त्यों ही त्यों छोटा पड़ता जाता। आयोजकों के उत्साह एवं लगन के कारण पूज्यश्री का यह सत्संग कार्यक्रम अब तक नगर में आयोजित समस्त धार्मिक कार्यक्रमों में सर्वाधिक विराट एवं अद्वितीय कार्यक्रम था।

**मुलुन्ड (बम्बई)** समिति द्वारा दिनांक २० अप्रेल ९५ से श्री आसारामायण का शांतिपाठ बालयोगी श्री नारायण स्वामी की प्रेरणा से आरम्भ किया गया था जिसका २०१ वाँ पाठ दिनांक १९ अक्तूबर ९५ को सम्पन्न हुआ। इसी दिन सत्य ध्यान विद्यापीठ, डॉ. अम्बेडकर रोड़, मुलुन्ड (वेस्ट) में सुरेशानंद ब्रह्मचारी द्वारा शांतिपाठ की पूर्णाहुति सम्पन्न हुई। श्री आसारामायण के सामूहिक शांतिपाठ में हजारों लोगों ने हिस्सा लिया।

---

(पृष्ठ १२ का शेष)

संत के हृदय को व आत्मा को छूकर आनेवाली वाणी सुनने से उसका ज्ञानयोग होता है। सत्संग के नियमों का पालन करते हुए जो सत्संग सुनता है उसे पाप मिटाने के लिये तपस्या, व्रत, उपवास की आवश्यकता नहीं है।

शास्त्रों में आता है :

**साधूनां दर्शनं पातकनाशनम् ।**

साधु पुरुष के दर्शन से पापनाश होने लगता है, पुण्योदय होता है व चित्त में शांति का प्रसाद प्रकट होने लगता है। जो लोग पन्द्रह-पन्द्रह और पच्चीस-पच्चीस वर्ष से नंगे पैर चलते हैं, उबला हुआ पानी ही पीते हैं, खारा-खट्टा नहीं खाते हैं उन तपस्वियों से भी सत्संगी चार कदम आगे की यात्रा का अनुभव करने लग जाता है।

बड़े धनभागी हैं वे लोग जिन्हें सत्संग के प्रति प्रेम है, श्रद्धा है, आदर है। किसी जीवन्मुक्त ब्रह्मवेत्ता का सान्निध्य पाते हुए जो साधनापथ पर अग्रसर हैं, ऐसे लोग पृथ्वी के देव कहे जाते हैं।

# जीवन संरक्षण

(१) जब आप मुश्किलियों एवं मुसीबतों में आ जाओ तब गुरु की कृपा के लिए प्रार्थना करो । अपने सच्चे हृदय से बार-बार प्रार्थना करो । सब सरल बन जाएगा ।

(२) ब्रह्मनिष्ठ गुरु के चरणकमलों के सान्निध्य में जाने के लिए कला, विज्ञान या विद्वत्ता कुछ भी आवश्यक नहीं है । आवश्यक है केवल उनके प्रति प्रेम और भक्ति से पूर्ण हृदय, जो फल की अपेक्षा से रहित, केवल उनमें ही निरत रहने के संकल्पवाला होना चाहिए... केवल उनके ही कार्य में लगा हुआ, केवल उनके ही प्रेम में मग्न रहनेवाला होना चाहिए ।

(३) आपके हृदय रूपी उद्यान में निष्ठा, सादगी, शान्ति, सहानुभूति, आत्मसंयम और आत्मत्याग जैसे पुष्प सुविकसित करो और वे पुष्प अपने गुरु को अर्घ्य के रूप में अर्पण करो ।

(४) ब्रह्मनिष्ठ गुरु की कृपा से प्राप्त न हो सके ऐसा तीनों लोकों में कुछ भी नहीं है । सद्गुरुकृपा से सब कुछ प्राप्त हो सकता है ।

(५) संसार या सांसारिक प्रक्रिया के मूल में मन है । बन्धन और मुक्ति, सुख और दुःख का कारण मन है । इस मन को गुरुभक्तियोग के अभ्यास से ही नियंत्रित किया जा सकता है ।

(६) सद्गुरु के दिव्य कार्य के वास्ते आत्मसमर्पण करना अथवा तन, मन, धन अर्पण करना चाहिए । सद्गुरु की कल्याणकारी कृपा प्राप्त करने के लिए उनके पवित्र चरणों का ध्यान करना चाहिए। गुरु के पवित्र उपदेश को सुनकर निष्ठापूर्वक उसके मुताबिक चलना चाहिए ।

(७) गुरुभक्तियोग का अभ्यास सांसारिक पदार्थों के प्रति वैराग्य और अनासक्ति पैदा करता है और अमरता प्रदान करता है ।

(८) सद्गुरु के जीवनप्रदायक चरणों में भक्ति महापापी का भी उद्धार कर देती है, परम कल्याण कर देती है ।

(९) साधुत्व और संन्यास से, अन्य योगों से एवं दान से, मंगल कार्य करने आदि से जो कुछ भी प्राप्त होता है वह सब गुरुभक्तियोग के अभ्यास से शीघ्र प्राप्त होता है ।

(१०) गुरुभक्तियोग शुद्ध विज्ञान है । वह निम्न प्रकृति को वश में लाने की एवं परम आनन्द प्राप्त करने की रीति सिखाता है ।

(११) गुरुदेव की कल्याणकारी कृपा प्राप्त करने के लिए आपके अन्तःकरण की गहराई से उनको प्रार्थना करो । ऐसी प्रार्थना चमत्कार कर सकती है ।

*- स्वामी शिवानंदजी*

बारडोली (गुज.) समिति द्वारा पूज्यश्री के आत्म-साक्षात्कार दिन को क्षेत्रीय आदिवासी ग्रामों में अनाज वितरण कार्यक्रम।

पंचेड़ समिति द्वारा निःशुल्क स्वास्थ्य परीक्षण शिविर।

जावदा (महा.) में संकीर्तन यात्रा... एव बाद में प्रसाद ग्रहण करते भक्तजन।

धरमपुर समिति (गुज.) द्वारा आयोजित विशाल संकीर्तन यात्रा।

श्री आसारामायण शांतिपाठ की पूर्णाहुति मुलुन्ड (बम्बई) समिति द्वारा।

हिम्मतनगर में निकाली गई विशाल संकीर्तन यात्रा।

चित्तौड़ (राज.) में संकीर्तन यात्रा।